गद्य समृद्ध

पाठ्य पुस्तक

बी.ए. / बी.एफ.ए./ बी.एस.डब्ल्यू / बी. म्यूजिक
B.A. / B.F.A. / B.S.W. / B. Music
– प्रथम सेमिस्टर

सी.बी.सी.एस.
C.B.C.S.

सम्पादन
डॉ. शेखर
डॉ. नीता हिरेमठ

प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बेंगलूरू – 560001

गद्य समृद्ध

पाठ्य पुस्तक

बी.ए. / बी.एफ.ए./ बी.एस.डब्ल्यू / बी. म्यूजिक
B.A. / B.F.A. / B.S.W. / B. Music
– प्रथम सेमिस्टर

सी.बी.सी.एस.
C.B.C.S.

सम्पादन
डॉ. शेखर
डॉ. नीता हिरेमठ

प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बेंगलूरू – 560001

GADHYA SAMRIDH : Edited By Dr. Shekhar & Dr. Neeta Hiremath
Published by Prasaraanga, Bengaluru Central University,
Bengaluru-560056
Pp. 80 + xii

© बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय
प्रथम संस्करण – 2019

प्रधान संपादक
डॉ. शेखर
डॉ. नीता हिरेमठ

प्रकाशक
प्रसारांग
बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बेंगलूरू – 560001

भूमिका

बेंगलूर विश्वविद्यालय 2014 – 2015 शैक्षिक वर्ष से सी.बी.सी.एस सेमिस्टर पद्धति से स्नातक वर्ग चला रहा है, किन्तु बेंगलूरु विश्वविद्यालय के विभाजन के फलस्वरूप बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय की ओर से आगामी 2019–2020, 2020–2021 तथा 2021–2022 शैक्षणिक वर्षों के लिए नवीन पाठ्यक्रम का निर्माण भी उपर्युक्त आधार पर ही स्नातक वर्ग हेतु किया गया है।

इस पृष्ठभूमि में हिन्दी–अध्ययन–मण्डल ने विभागाध्यक्ष डॉ. शेखर के मार्गदर्शन में पाठ्य–पुस्तक का निर्माण किया है।

संपादक–मण्डंल का विश्वास है कि यह गद्य–संकलन छात्र–समुदाय के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध होगा। इस पाठ्य–पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले सभी के प्रति विश्वविद्यालय आभारी है ।

इस संकलन को अल्प समय में सुन्दर रूप से छापने वाले कुल सचिव बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय तथा मैसूर विश्वविद्यालय मुद्रणालय के कर्मचारियों के प्रति भी हम आभारी हैं।

प्रो. जाफट. एस
कुलपति
बेंगलुर केन्द्रीय विश्वविद्यालय
बेंगलूरु

24.	Founder	संस्थापक
25.	Grace Marks	अनुग्रहांक
26.	Graduate	स्नातक
27.	Gross income	सकल आय
28.	Guidance	मार्गदर्शन/निर्देशन
29.	Guideline	निर्देश तत्व/गाइड लाइन
30.	Handloom	हाथकरधा
31.	Highway	राजपथ/राज मार्ग
32.	Import	आयात
33.	Identity Card	पहचान पत्र
34.	Industrialization	उद्योगीकरण
35.	Leave, Carned	उर्जित छुट्टी
36.	Library	पुस्तकालय/ग्रन्थालय
37.	Manifesto	घोषणा पत्र
38.	Maximum	अधिकतम
39.	Monument	स्मारक
40.	Multinational	बहु राष्ट्रीय
41.	Parliament	संसद
42.	Postponement	स्थगन/ मूलवती
43.	Priority	प्राथमिकता/अग्रता
44.	Privilege	विशेषाधिकार/प्राधिकार
45.	Promotion	पदोन्नति
46.	Questionnaire	प्रश्नावली
47.	Quiz	प्रश्नोत्तरी
48.	Reminder	अनुस्मारक
49.	Reservation	आरक्षण
50.	Signature	हस्ताक्षर

परिशिष्ट – 1

शब्दावली

01.	Abbreviation	संक्षेप
02.	Absence	अनुपस्थिति
03.	Accident	दुर्घटना
04.	Activity	क्रियाकलाप
05.	Administration	प्रशासन
06.	Admission	प्रवेश
07.	Advertisement	विज्ञापन
08.	Application	आवेदन
09.	Approval	अनुमोदन
10.	Assembly	विधानसभा
11.	Automatic	स्वचालित
12.	Ballot	मतपत्र
13.	Broadcast	प्रसारण
14.	Commitment	सुपुर्दगी
15.	Confidential	गोपनीय
16.	Corruption	भ्रष्टाचार
17.	Definition	परिभाषा
18.	Democracy	लोकतंत्र
19.	Designation	पदनाम
20.	Document	दस्तावेज
21.	Emergency	आपात काल
22.	Enrolment	नामांकन / नाम लिखाई
23.	First aid	प्राथमिक चिकित्सा

प्रकाशक की बात

बेंगलूर केन्द्रीय विश्वविद्यालय ने स्नातक–वर्गों के लिए जो सेमिस्टर पद्धति (सी.बी.सी.एस.) लागू किया है, उसके अनुसार हिन्दी–अध्ययन–मण्डल ने अपने विभागाध्यक्ष के मार्गदर्शन में पाठ्य–पुस्तक का निर्माण किया है ।

पाठ्य–पुस्तक को समय पर तैयार करने में डॉ. शेखर जी और डॉ. नीता हिरेमठ जी ने बडा सहयोग दिया है। उनके प्रति मैं आभारी हूँ ।

विश्वविद्यालय की ओर से पाठ्य–पुस्तकों को प्रकाशित कराने में कुलपति प्रो. जाफट. एस जी ने अत्यन्त उत्साह दिखाया है। एतदर्थ मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ। इस पुस्तुक को सुन्दर रूप से छापने वाले मुद्रणालय कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभारी हूँ।

कुलसचिव
बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय

अध्यक्ष की बात

बेंगलूर केन्द्रीय विश्वविद्यालय शैक्षणिक क्षेत्र में नये–नये विषयों को अपने अध्ययन की सीमा में ले रहा है। अध्ययन को आज के संदर्भ के अनुसार प्रस्तुत करने का प्रयत्न हो रहा है। साहित्यिक विषयों को आज की बदलती परिस्थितियों के अनुसार रुपित करने के उद्देश्य से पाठ्यक्रम को प्रस्तुत किया जा रहा है।

सेमिस्टर पद्धति (सी.बी.सी.एस.) के अनुकूल स्नातक वर्गों के लिए पाठ्यक्रम का निर्माण किया गया है। इस पाठ्य पुस्तक के निर्माण में योग देने वाले संपादकों के प्रति मैं आभारी हूँ।

इन नये पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण में कुलपति महोदय प्रो. जाफट. एस जी ने अत्यधिक प्रोत्साहन दिया, एतदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

पुस्तक के प्रकाशक, कुलसचिव बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वद्यिालय तथा मैसूर विश्वविद्यालय मुद्रणालय के सभी कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभारी हूँ।

डॉ. शेखर
अध्यक्ष
हिन्दी विभाग
बेंगलूरु विश्वविद्यालय

जानने की जरूरत है। हमें इस बारे में भी और जानकारी हासिल करनी है कि इनसे क्या हो सकता है। जब तब कोई रसायन बिना किसी संदिग्धता के गैर जरूरी और हानिकर सिद्ध न हो जाए, तब तक उसका इस्तेमाल, उनके गलत इस्तेमाल से हो सकने वाली सभी हानियों को पूरी तरह जानते समझते हुए, पूरे विवेक के साथ किया जाना चाहिए। प्रश्न उठता है कि क्या हम ऐसा करने में सफल हो सकते हैं? बहुत से मामलों में ऐसा किया जा चुका है और यदि हम कोशिश करें तो ऐसा अवश्य कर सकते हैं। इसमें शक नहीं, हमें लगातार सतर्क रहना होगा। रायासनिक सुरक्षा को प्रतिदिन का कार्य मान लिया जाना चाहिए।

रहा है। दूसरी ओर सामाजिक निर्णय सरकार को लेने होते हैं। किन्तु सरकार विज्ञान से लेकर सामान्य बुद्धि तक, सभी उपलब्ध सूचनाओं का उपयोग करके वह निर्णय किस प्रकार ले? रसायनों के इस्तेमाल पर सरकारी निर्णय, कानून और नियम बढ़ते जा रहे हैं क्योंकि जनता के स्वास्थ्य की सुरक्षा का कानूनी उत्तरदायित्व है।

रसायनों के सम्बन्ध में सूचनाओं का विश्लेषण आसान नहीं है। सभी प्रकार के लोगों का इस सूचना भंडार में योगदान होता है। इनमें अक्सर असहमतियाँ होती हैं। मोटर–गाडियों की गति सीमा कितनी होनी चाहिए? कोई रसायन कारखाना, रोजगार, उत्पादन और सेवाएँ उपलब्ध करने के लिए बताया जाना चाहिए या उसे इसलिए नहीं बनाया जाना चाहिए क्योंकि वह प्रदूषण फैलाता है? ये सब रोज के प्रश्न हैं। हमारे निर्णय पर भावनाएं और आशंकाएं हावी हो जाती है। सही वैज्ञानिक तथ्य अधिकतर मौजूद नहीं होते या पर्याप्त नहीं होते। रसायनों के जोखिम के प्रति निर्णय लेना कभी भी आसान नहीं है, किन्तु आवश्यक हमेशा है। जोखिमों और लाभों के बारे में निर्णय लेने वाले तो हम सब ही हैं।

रसायन हमारी आवश्यकता है। ये हमारे पर्यावरण में हमेशा मौजूद है, इनकी सूक्ष्म अथवा लेश मात्रा भी अर्थपूर्ण हो सकती है। इन लेश रसायनों के बारे में हमें और अधिक

प्रधान संपादक की बात.....

हिन्दी साहित्य बहु आयामी है। आदिकाल से आधुनिक काल तक की यात्रा के दौरान हिन्दी में विपुल रूप से परिवर्तन और परिवर्द्धन होता रहा है। इस दौरान हिन्दी साहित्यिक विधाओं में विशेषत: गद्य में विभिन्न रूपों में पर्याप्त रचनाएं हुई हैं, जिनसे हिन्दी साहित्य समृद्ध हुआ है।

हिन्दी, समन्वय–एकता और अखण्डता की भाषा भी है। आधुनिक युग की सभी भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी के साथ हिन्दी ने समन्वय स्थापित किया है। हिन्दी भाषा की यह समन्वय प्रवृत्ति उसके साहित्य में भी पायी जाती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि साहित्य की उदारता ने ही भाषा को भी उदार बनाया है। इस प्रकार हिन्दी भाषा और उसका साहित्य दोनों ही राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गए हैं।

संस्कृत, पाली, प्राकृत और अपभ्रंश के साहित्यों की परम्परा विकसित होकर हिन्दी साहित्य लगभग बाहर सौ वर्षों की सुदीर्घ यात्रा में निरन्तर राष्ट्रीय एकता का वाहक बनकर विकास की ओर बढ़ रहा है। आजादी के पहले और बाद में पाली साहित्य का भी काफी प्रभाव हिन्दी साहित्य पर हुआ।

हिन्दी साहित्य की यात्रा के इस युग में कहानी, एकांकी, नाटक, आत्मकथा, उपन्यास, हास्य–व्यंग्य, रिपोर्ताज, यात्रा वृतांत, संस्मरण, निबन्ध जैसे अनेक विधाएं गद्य साहित्य में पनपीं। आज वैश्वीकरण के इस दौर में हिन्दी गद्य साहित्य ने अपना एक सुदृढ़ स्थान और पहचान बना

लिया है।

आज किसी भी साहित्य की पहुंच दुनिया के कोने–कोने में सम्भव हुआ है तो इसमें कम्प्यूटर तकनीक का बहुत बड़ा योगदान है और अगर हम कम्प्यूटर तकनीक के विद्यार्थियों को साहित्य से जोड़े रख सकें, तो आने वाले समय मे साहित्य की नवकृति से खुद भी अगवत होंगे और दुनिया को भी द्रुतगति से इसका परिचय कराते हुए आगे ले जाएंगे।

गद्य विधा का यह संकलन बेंगलूरु केन्द्रीय विश्वविद्यालय के बी.ए, बी.एफ.ए., बी.एस.डब्ल्यू तथा बी. म्यूजिक (प्रथम सेमिस्टर) स्नातक वर्ग के लिए (सी.बी.सी.एस.) चयन आधारित क्रेडिट पद्धति पर आधारित पाठ्क्रम है। इस गद्य संकलन का प्रमुख उद्देश्य अहिन्दी भाषी प्रदेशों के विद्याथियों को हिन्दी गद्य साहित्य की विविध विधाओं से परिचित कराना है।

डॉ. शेखर
डॉ. नीता हिरेमठ

कारण होता है। यह तथ्य है या यूँ ही उड़ाई गई बात? कैंसर से सम्बन्धित आँकड़े आज अविश्वसनीय है। ऐसी रिपोर्ट भी मौजूद है जो संकेत देती है कि कैंसर के मामले बढ़ रहे हैं किन्तु अन्य रिपोर्टों के अनुसार कैंसर के मामले कम होते जा रहे हैं। पिछले 25 वर्षों में पेट के कैंसर के मामलों में कमी आई है, किन्तु फेफड़ों का कैंसर बढ़ा है।

आमतौर पर यह बताया गया है कि कैंसर के 80 प्रतिशत मामले पर्यावरणीय कारणों से सम्बन्धित हैं। इसका अर्थ यह लगा लिया जाता है कि सारा दोष संश्लेषित रसायनों और वायु प्रदूषण का है। तथ्य जबकि यह है कि ये आँकड़े केवल अर्ध अनुमान आधारित हैं, उनमें उन सभी कैंसरों के मामलों को भी गिना जाता है आनुवांशिक नहीं हैं। पर्यावरणीय कारणों से तम्बाकू, शराब, सूरज की रोशनी और स्वच्छता भी शामिल है और प्रदूषण भी। प्रत्यक्ष रूप से प्रातःकाल के वातावरण के कारण उत्पन्न कैंसर, कुल कैंसरों के मामलों का एक से पाँच प्रतिशत है।

रसायनों के बारे में, समाज के प्रति उसके लाभों और खतरों के बारे में निर्णय कौन करे? इस सम्बन्ध में व्यक्तिगत और सामाजिक दृष्टिकोण है जो आदमी सिगरेट पीता है या शराब का सेवन करता है और अपनी सेहत के प्रति लापरवाह है, जोखिमों के सम्बन्ध में वह अपना ही निर्णय ले

कर छिड़का जाता है, किन्तु इसके लिए इन्हें भली भाँति परखा जाता है और इस्तेमाल की अनुमति दी जाती हे। कारण, इससे फसल की वृद्धि के रूप में अधिक लाभ प्राप्त होता है। रासायनिक कीटनाशियों के इस तरह से नियंत्रित इस्तेमाल के खतरे ग्राह्य जोखिम हैं, लेकिन जोखिम का मूल्यांकन समय अथवा परिस्थितियों के साथ बदल सकता है। विकसित देशों में सन् 1972 ई. के बाद डी.डी.टी. पर प्रतिबन्ध लगा दिया था, किन्तु विकासशील देश डी.डी.टी के लगातार इस्तेमाल में आज भी लाभ देख रहे हैं।

कुछ रसायन जो अपने आप में सुरक्षित हैं, उस समय हानि पहुँचाते हैं जब वे अन्य पदार्थों से क्रिया कर लेते हैं या फिर जब वे अन्य पदार्थों के साथ मिलने के बाद अपना जहरीलापन छोड़ देते हैं। सोडियम और क्लोरीन दोनों खतरनाक हैं, किन्तु साधारण नमक, सोडियम क्लोराइड जीवन के लिए जरूरी है। दूसरी और समुद्र का पानी पीने की दृष्टि से अतयन्त जहरीला है और लम्बे समय तक नमक का सेवन रक्तचाप बढ़ने का कारण बन जाता है, जो एक दीर्घकालिक जोखिम है। यहाँ पर, मात्रा और जहरीलापन दोनों तथ्य जोखिम के अर्थ को प्रभावित करते हैं।

कैंसर सबसे भयानक रोग है। कहा जाता है कि कैंसर अधिकतर पर्यावरणीय रसायनों के प्रति उद्‌भासन के

अनुक्रमणिका

01. **सेवा** (कहानी) 01
महादेवी वर्मा

02 **चरित्र संगठन** (चारित्रिक निबन्ध) 16
बाबू गुलाब राय

03 **ईमानदारों के सम्मेलनों में** (व्यंग्य लेख) 28
हरिशंकर परसाई

04 **सुई दो रानी, डोरा दो रानी** (यात्रावृत्त) 38
महादेवी वर्मा

05 **शिवाजी का सच्चा स्वरूप** (एकांकी) 47
सेठ गोविन्द दास

06 **काव्य यात्रा जरूरी है** (आत्म रचना) 59
रामविलास शर्मा

07 **रसायन और पर्यावरण** (निबंध) 68
डॉ. एन.एल. रामनाथन

परिशिष्ट–1 वैज्ञानिक शब्दावली 78

सबसे पहले यह जरूरी है कि खतरों को पहचाना जाए। इसके बाद हमें अपने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वर्तमान ज्ञान के आधार पर उन्हें निम्नतम स्तर तक कम करना चाहिए, किन्तु ज्ञान का कितना भी ऊँचा स्तर अथवा सरकारी कानून इन जोखिमों को पूरी तरह दूर नहीं कर सकते। क्या कोई दुनिया की उस स्थिति की कल्पना कर सकता है जिसमें सभी संभाव्य खतरनाक रसायनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया हो? ऐसा कुछ भी तो नहीं है जिससे हानि हो सकने की संभावना न हो। एक पुरानी कहावत है जिसका आशय है ''अति से तो अमृत भी जहर बन जाता है।''

हमें जोखिमों पर अपने निर्णय खतरे की संभाव्यता के अधार पर जोखिम लाभ विश्लेषण की संकल्पना को ध्यान में रखकर लेने होंगे। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिसमें काले को विशुद्ध काला और सफेद को विशुद्ध सफेद बतलाया जा सके अथवा स्पष्ट हाँ या न कहा जा सके। यह किया कैसे जाये? और क्या वह किया जाना आवश्यक है भी? इस बारे में लोगों की रायों में बहुत अन्तर होता है। इसलिए ग्राह्य जोखिम और अग्राह्य जोखिम शब्दों का इह्यतेमाल होने लगा है।

खेती में इस्तेमाल होने वाले कीटनाशी मनुष्य के लिए किसी न किसी हद तक जहरीले हैं, इन्हें पर्यावरण में जानबूझ

इस्तेमाल होने वाले रसायनों के दीर्घकालिक खतरों से भरा पड़ा है, इन रसायनों में भारी धातुएं कार्बनिक विलायक, जहरीली वाष्प और गैसीय उत्सर्जक शामिल हैं। इनमें से अनेक प्रदूषकों को हम भोजन और पानी के साथ अपने पेट में अथवा साँस के साथ अपने फेफड़ों में ले जाते हैं। दुर्भाग्य से वायु प्रदूषण एक घरेलू शब्द बन गया है। कुछ ऐसे रसायन भी मौजूद हैं जो हमारी सही सलामत खाल से होते हुए हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

सीसा यानी लेड एक सर्वव्यापि विष है। सल्फर डाइऑक्साइड सब जगह पाई जाती है। हमारे लगभग सभी खाद्य पदार्थों में कीटनाशक दवाइयों के अवशेष पहुँच चुके हैं। इनमें से अधिकतर रसायनों के जहरीलेपन के बारे में हमें जानकारी है, पर फिर भी इनसे जुड़े खतरों के बारे में अनेक ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर हमें मालूम नहीं है। इन प्रश्नों के बारे में वैज्ञानिकों की अलग–अलग राय है, पर इस बात से सभी सहमत हैं कि रसायनों के सम्पर्क में रह कर काम करने वाले कर्मचारियों को उनसे सुरक्षा प्रदान करने और आम जनता तथा पर्यावरण को निम्न स्तरीय प्रदूषण से बचाने के लिए कदम उठाये जाने चाहिए। रासायनिक उत्पादों से निश्चित सुरक्षा पाने व पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाने के लिए हमें और अधिक जानकारी हासिल करने की जरूरत है।

1. सेवा

ममता कालिया

लेखक परिचय

समकालीन ख्यात महिला लेखिकाओं में ममता कालिया का महत्वपूर्ण स्थान है। उनका जनम 2 नवम्बर 1940 को वृन्दावन में हुआ। मध्यमवर्गीय जीवन की समझ और संवेदनशील भाषा में मनोविज्ञान का पुट मिलाकर उन्होंने जो कथा फलक तैयार किया है, वह उन्हें हिन्दी कहानीकारों में विशेष पहचान प्रदान करता है। उनकी अधिकांश कहानियों मध्यवर्गीय नारी जीवन की नियति को परिभाषित करती है। छुटकारा, सीट नम्बर छह, एक अदद औरत, प्रतिदिन, जांच अभी जारी है, इनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं।

*****

पाठ परिचय

सेवा ममता कालिया के सन् 2001 में प्रकाशित बोलने वाली औरत में संकलित कहानी है। यह आज के मतलब परस्त एवं खोखले मानवीय सम्बन्धों पर किया गया व्यंग्य है। सम्बन्धों की पवित्रता और ऊष्मा नष्ट होती जा रही है, चाहे वह माँ–बाप के बीच का हो या माँ–बाप तथा सन्तानों के बीच का।

पत्नी की आकस्मिक बीमारी ने नरोत्तम सहाय को एकदम निरुपाय कर दिया है। उन्होंने अपनी सन्तानों को खबर दी। सूचना पाकर दोनों बेटियाँ माँ के पास आ जाती है। इलाज ठीक से चल रहा है, उसे देखकर वे आश्वस्त हो गयीं, लेकिन दो–तीन दिनों के बाद वे लौट जाने का उपक्रम करतीं हैं तो नरोत्तम जी चिन्तित हो जाते हैं। बेटियाँ कह देती है कि ''पापा, आप तो अभी से घबरा गए। जरा सोचिए, हमारी माँ ने चालीस साल आपकी सेवा की है, आज वे बीमार पड़ी हैं तो आपका फर्ज है उनकी सेवा करें।'' नरोत्तम जी अपनी बेटियों के दिल दुखाना नहीं चाहते थे तो वे चुप रहे। पत्नी के अस्पताल में भरती हुए पाँच दिनों के बाद भी बेटे के माँ से मिलने न आने से नरोत्तम जी काफी दु:खी थे। पत्नी के होश लौट आने की प्रतीक्षा में वे लगातार पाँच दिनों से अस्पताल में इन्ताजर कर रहे हैं लेकिन उनकी सन्तानें या कोई अन्य मित्र उनकी अवस्था का ख्याल भी नहीं करते हैं। बेटियाँ हिदायतें देकर लौट जाती हैं तो बेटा और बहू भी अपनी मजबूरी जताते हुए माँ की हालत को विस्तार से नहीं 'नटशैल' में बताने का आग्रह करते हैं। वे इतनी हड़बड़ी में हैं कि उन्हें कलकत्ते में मीटिंग में जाना है। माँ का दर्शन करके एक–आध घण्टे में बेटा भी जाने का उपक्रम करता है। बहू भी सास की सेवा में रुकने को तैयार नहीं है। वह कहती है कि उसकी अगले दिन

प्रभावित नहीं करते जो उसके सम्पर्क में रहते हैं, पर उनके प्रभाव अगली या उससे भी अगली पीढ़ी को झेलने पड़ते हैं। ऐस्बेस्टस ने, जिसे हमने एक सुरक्षित पदार्थ समझा था और जो अग्नि को भी सह सकता है, अपने कैंसर पैदा करने के अवगुण से हमें आश्चर्य में डाल दिया। पोलीक्लोरिनेटिड बाफिनिल, जो अपने पैरावैद्युत (डाई इलेक्ट्रिक) गुण के कारण जाने जाते हैं, वातावरण में धीरे–धीरे इकट्टे होते जाते हैं और एक लम्बे समय के बाद जीवों, मछलियों और यहाँ तक कि मनुष्यों के लिए भी खतरा उत्पन्न कर देते हैं। एक अन्य गजब के रसायन डीडीटी को तब खतरनाक करार दिया गया जब रचैत कार्सन ने अपनी पुस्तक साइलैंट स्प्रिंग में इसके अवगुण बताये। कास्टिक सोड़ा के उत्पादन में काम आने वाली मरकरी सेल प्रौद्योगिकी दो दशक पहले तब तक बड़े मजे से इस्तेमाल की जाती रही, जब तक कि विश्व के सामने जापान में मिनामाटा की मछली खाने वाली आबादी में अपंग बना देने वाला और आमतौर पर घातक सिद्ध होने वाला स्नायु रोग फैलने की घटना सामने नहीं आई। वह रोग पानी में बहिस्राव के रूप में बताए जाने वाले मरकरी के कारण फैल रहा था। इसका मेथिल मरकरी में जैविक परितर्वन हो रहा था और मछलियाँ उसे मनुष्य में पहुँचा रही थीं।

हमारा आधुनिक औद्योगिक अनुभव, प्रतिदिन

ऊपर कुछ गिर जाने का खतरा। कुछ खतरे ऐसे हैं जिनके प्रभाव लम्बे समय के बाद सामने आते हैं जैसे लम्बे समय तक शोर–गुल वाले पर्यावरण में रहने वाले व्यक्तियों की श्रवण शक्ति कम हो सकती है।

क्या रसायन भी जोखिम उत्पन्न करते हैं। स्पष्ट है कि कुछ अवश्य करते हैं। उनमें से अनेक बहुत अधिक जहरीले हैं, कुछ प्रचंड विस्फोट करते हैं और कुछ अन्य अचानक आग पकड़ लेते हैं, वे रसायनों में कुछ तात्कालिक उग्र खतरे हैं। रसायनों में कुछ दीर्घकालिक खतरे भी होते हैं, क्योंकि कुछ रसायनों में सम्पर्क में अधिक समय तक रहने पर, चाहे उन रसायनों का स्तर लेशमात्र ही क्यों न हो, शरीर में बीमारियाँ पैदा हो सकती है।

वास्तव में रसायनों के बारे में यह कहना शायद गलत न हो कि जो रसायन जितना अधिक जहरीला या खतरनाक होता है, उसका उपयोग आज उतना ही सुरक्षित है, क्योंकि लोग उसके बारे में पहले से सावधान होते हैं और इसलिए इन्हें इस्तेमाल करते वक्त काफी सतर्क रहते हैं।

लेकिन अपेक्षाकृत कम जहरीले रसायनों के बारे में यही बात नहीं कही जा सकती है। रसायनों के लम्बे समय के बाद उजागर होने वाले प्रभाव, दीर्घकालिक खतरे, अभी हाल ही में पहचानी गई समस्या है, कुछ रसायन उन पीढ़ी को तो

स्कूल में पेरेण्ट टीचर मीटिंग है। जाते वक्त बेटा पिता को हिदायत देता है कि उसे सुबह शाम मम्मी की हालत के बारे में फोन करते रहें। आज के मतलबपरस्त एवं खोखले मानवीय सम्बन्धों की झाँकी यहाँ द्रष्टव्य है – पत्नी अर्धचेतन अवस्था में बिस्सू को याद कर रही थी। नरोत्तम जी पत्नी से बोले, ''हाँ, तुम्हारा बेटा बिस्सू। इसे तुमने पैदा किया, पाला–पोसा। याद है कैसे इसकी जरा नाक बहते ही तुम मेरी नाक में दम कर देती थी, डॉक्टर को बुलाओ, खिड़की बन्द करो, नया कम्बल लाओ। यह लाट साहब सो जाता था, तुम इसका होमवर्क करती थी, आधी–आधी रात तक। आज तुम बेहोश पड़ी हो और बेटे को फुर्सत नहीं है तुम्हारे पास बैठने की। मुझसे कहता है, 'नटशैल' में बताइए मम्मी को क्या हुआ है। .... तुम जल्दी से ठीक हो जाओ। देखों, आँखें खोलो। तुम्हारे सिवाय मेरा और है ही कौन?''

जिन हाथों ने पाला–पोसा, बड़ा किया, सामर्थ्य से अधिक शिक्षा दी और पेरों पर खड़ा करने योग्य बनाया है, उनकी वृद्धावस्था में, बीमारी में साथ देने का, सेवा–सुश्रुषा करने का दायितव सन्तानें नहीं निभाती हैं तो ऐसी सन्तानों से क्या लाभ? आए दिन नर्सरी स्कूलों से ज्यादा वृद्ध सदनों की स्थापना हो रही है। जीवन की साँझ में अपने खून का अंश उन्हें घर से बाहर कर देता है, खुले रास्ते में छोड़ देता है,

पेन्शन व अन्य सम्पत्ति लूट लेता है, यहाँ तक कि खत्म करने का जघन्य कार्य तक आए दिन हमारे समाज में चलता है। सेवा में समकालीन समय की ज्वलंत समस्या प्रभावी ढंग से अभिव्यक्त हुई है। नरोत्तमदास का आत्म संवाद पाठकों के दिल को रुला देता है। यह आज के औसतन बूढ़े–बुजुर्गों की पीड़ा है, जिसका हल ढूँढना हमारे सामाजिक जीवन की सुस्थिति के लिए अनिवार्य कार्य है।

*****

अस्पताल के अहाते में गेट से लेकर पोर्च तक कतार में अशोक के पेड़ लगे थे। अपने प्रतीकात्मक अर्थ में वे बड़े सुन्दर थे। फिर भी सच्चाई यह थी कि अशोक के होते हुए भी अस्पताल के अहाते में शोक और दु:ख के दृश्य प्राय: रोज देखने को मिलते। आकस्मिक वार्ड में आकस्मिक दुर्घटना के मरीज लाए जाते, कुछ देर डॉक्टरों, नर्सों, वार्ड ब्वॉय की चुस्ती–फुर्ती दिखाई देती, फिर लाल कम्बल से ढका स्ट्रेचर या तो ग्लूकोज की बोतल के साथ ऑपरेशन थिएटर की तरफ मुड़ जाता या बाहर की ओर, जहाँ से हाहाकार का एक थपेड़ा कानों पर पड़ता।

इसीलिए नरोत्तम सहाय अहाते में बैठने से कतराते। इस वक्त वे पत्नी के पलँग के पास कुर्सी डाले बैठे थे। कहने को उनके हाथ में आज का अखबार था, लेकिन पिछले आधे

हम रसायनों के युग में रह रहे हैं। हमारे पर्यावरण की सारी वस्तुएं और हम सब, रासायनिक यौगिकों के बने हुए हैं। हवा, मिट्टी, पानी, खाना, वनस्पति और जीव जन्तु ये सब अजूबे जीवन की रासायनिक सच्चाई ने पैदा किए हैं। प्रकृति में सैकड़ों–हजारों रासायनिक पदार्थ हैं। रसायन न होते तो धरती पर जीवन भी नहीं होता। पानी, जो जीवन का आधार है, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बना एक रासायनिक यौगिक है। मधुर मीठी चीनी, कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन से बनी है। कोयला और तेल, बीमारियों से मुक्ति दिलाने वाली औषधियाँ, एंटीबायोटिक्स, एस्प्रीन और पेनिसिलीन, अनाज, सब्जियाँ, फल और मेवे सभी तो रसायन है।

जीवन जोखिम से भरा है, गुफा मानव ने जब भी आग जलाई उसने जल जाने का खतरा उठाया। जीवनयापन के आधुनिक तरीकों ने कुछ खतरों को कम किया है, पर कुछ खतरे अनेक गुणा बढ़ गए हैं। ये खतरे नुकसान और शारीरिक चोट के रूप में है। हम सभी अपने दैनिक जीवन में जोखिम उठाते हैं। जैसे जब हम सड़क पार करते हैं, स्टोव जलाते हैं, कार में बैठते हैं, खेलते हैं, पालतू जानवरों को दुलारते हैं, घरेलू काम–काज करते हैं या केवल पेड़ के नीचे बैठते होते हैं, तो हम जोखिम उठा रहे होते हैं। इन जोखिमों में से कुछ तात्कालिक हैं, जैसे जलने का, गिरने का या अपने

7. रसायन और हमारा पर्यावरण

डॉ. एन.एल. रामनाथन

लेखक परिचय

डॉ. एन. एल. रामनाथन का जनम 1927 ई. में केरल में हुआ था। कोचीन से आरम्भिक शिक्षा पाने केबाद आपने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भौतिकी में एम.एस.सी. की उपाधि प्राप्त की। बेंगलौर तथा कलकत्ता में रहते हुए आपने भौतिकी और पर्यावरण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण शोध कार्य किया। जादवपुर विश्वविद्यालय से इन्हें पी.एच.डी. की उपाधि प्रदान की गयी।

*****

पाठ परिचय

पाठ में यह बताया गया है कि जहाँ रसायन हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं वहीं ये रसायन हमारे जीवन में हानिकारक भी हैं। इन रसायनों के अनियन्त्रित या अनियमित उपयोग से हमारे पर्यावरण पर बुरा असर पड़ता है। इसका असर हमारी आने वाली पीढ़ियों के लिए ओर भी घातक साबित होगा। हमें इन रसायनों के प्रति जागरूक होना जरूरी है। जिससे आने वाली पीढ़ियों के साथ–साथ हमारे पर्यावरण पर होने वाले दुष्प्रभावों से भी बचाया जा सके।

*****

घंटे से उन्होंने इसका एक भी शब्द नहीं पढ़ा। वे न अखबार की तरफ देख रहे थे, न बाहर। वे शायद अपने अन्दर झाँक रहे थे।

उनके अन्दर अकस्मात् एक बियाबान उगकर फैलने लगा था। वे हैरान थे कि यह बियाबान उस दिन भी नहीं उगा, जब उनकी बेटियों की शादी हुई। यहाँ तक कि जब उनके लाडले बेटे विस्मय को घर छोड़कर दिल्ली जाना पड़ा, जहाँ विशाल इण्डस्ट्रियल कॉम्पलेक्स में उसकी नियुक्ति हुई थी, वे उदास नहीं हुए लेकिन अब पत्नी की आकस्मिक बीमारी ने उनको एकदम निरुपाय बना डाला। पहले कभी अकेला लगता तो वे खट् से रेडियो खोल लेते। रेडियो के चलते ही वे समूची दुनिया से जुड़ जाते। कभी–कभी वे टीवी और रेडियो एक साथ खोल लेते। पत्नी मना करती तो कहते ''मैं देख रहा हूँ किसके कार्यक्रम बेहतर हैं।'' लेकिन इधर पन्द्रह दिन से जब से पत्नी बीमार पड़ी है, नरोत्तम सहाय भयंकर अकेले हो गये। उन्हें हैरानी थी कि कैसे जरा सी चोट लगने से वह घायल होकर अस्पताल पहुँच गयी और यहाँ भी पन्द्रह दिन से बेहोश है। बाथरूप में पाँव फिसल जाने से उसकी कनपटी पर हल्की सी चोट आयी थी, पर वह तत्काल बेहोश हो गयी। नरोत्तम जी ने उसे कॉरामिन, गोल्ड ड्रॉप्स और जो भी उनकी समझ में आया, देकर देखा, कुछ न हुआ।

लाचार वे पड़ोसियों के कहने पर पत्नी को अस्पताल ले आये। पता चला उन्हें ब्रेन हैमरेज हो गया है।

घबराहट में उन्होंने तीनों बच्चों को खबर कर दी। दो दिन के अन्दर उनकी दोनों लड़कियाँ आ गयीं 'मम्मी–मम्मी' करतीं। जब नरोत्तम जी ने उन्हें चोट के बारे में बताया,लड़कियों ने गुस्से से उनकी तरफ देखा, मानो उन्हीं की गलती से पत्नी गिर पड़ी थी। लड़कियों को माँ की बेहद फिक्र थी, पर दोनों अपने–अपने दफ्तर से छुट्टी लेकर आयी थीं, ज्यादा देर टिकर बैठना उनके लिए मुमकिन न था। तीन दिन उन्होंने अस्पताल का उपचार देखकर सन्तोष प्रकट किया ''इलाज ठीक हो रहा है। पास ही सिस्टर का ड्यूटी रूम है।पापा आप मम्मी का ठीक से इलाज कराइए। आप ही को ध्यान रखना है इनका।''

पत्नी की नाक में नली लगी थी, जिसके रास्ते दूध, जूस और पानी उन्हें दे दिया जाता था। ड्यूटी पर तैनात नर्स नियम से तीन घण्टे बाद आती और उन्हें पथ्य पिला जाती।

बेटियों ने अफसोस में सिर हिलाया – ''मम्मी होश में होती तो हम कोई ताकत की चीज बनाकर इन्हें खिलाते, पर अब तो लिक्विड डाइट के सिवाय कुछ दिया ही नहीं जा सकता। हमारा रुकने का क्या फायदा पापा, हम जाएँ?'' नरोत्तम जी का मन बेटियों के आने से थोड़ा सँभला था। उनके

गाँवों में जन्मे रचनाकार भी शहरों में आ बसे हैं। जीवन की आपाधापी और हलचल भरी जिन्दगी ने उन्हें प्रकृति से दूर फेंक दिया है। उससे उनका सम्बन्ध निरन्तर छूटता जा रहा है। प्रकृति से इस अलगाव के कारण धीरे–धीरे कविता से जीवन का स्पंदन गुम होता जा रहा था। शायद यही सोचकर अधुनातन कविता में चिड़िया, नदी और पेड़ का आविर्भाव हुआ है। यह एक शुभ संकेत है।

अंत में मैं इस तथ्य की ओर संकेत करना चाहता हूँ कि हर रचनाकार के संवेदनशील अंतःकरण में एक कुआँ होता है जिसमें निर्मल जल के एकाधिक स्त्रोत होते हैं।

कभी–कभी ये स्त्रोत अनायास सूख जाते हैं किन्तु कुछ लोग इस तथ्य को झुठलाकर लगातार बाल्टियाँ खींचते चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में तलछट का पंक बाहर आ जाना स्वाभाविक है। साहित्यकार का दायित्व साहित्य की क्यारियों में निर्मल जल उसींचना है। अतः सृजन के प्रति संयम साहित्य एवं साहित्यकार दोनों के लिए श्रेयस्कर है।

मेरे लिए इससे अधिक संतोष की बात और क्या होगी कि मेरी काव्य यात्रा आज भी जारी है।

✍❐✍❐

कविता को लाउड होने से बचाया। अनुभव से यह समझ भी विकसित हुई कि मानवीय अस्मिता के स्वर कविता में किसी वाद के खूंटे से बंधे बिना भी अधिक सार्थकता से उजागर किये जा सकते हैं। बशर्त रचनाकार के पास एक साफ और सुलझी हुई दृष्टि हो। इसके बावजूद मैं मानता हूँ कि फिसलन से बचने के लिए प्रतिबद्धता का अंकुश अनिवार्य है।

एक बात और स्पष्ट कर दूँ कि सायास कविता रचना मेरे बूते के बाहर है। मेरे निकट कविता कोई ऐसा उत्पादन नहीं जिसे माँग के मुताबिक तैयार कर निश्चित अवधि में प्रस्तुत किया जा सके। वह तो टहनी की कोख से फूटती कोंपल की तरह है या बीज के गर्भ में आँख खोलकर झाँकते अंकुर के सदृश्य है जिसका जन्म अपने आप होता है।

कविता की सार्थकता उसकी सहज संप्रेषणीयता में निहित है। जिन्दगी की जटिलता रचना को भी जटिल बना देती है, इससे मैं सहमत नहीं हूँ। यही कारण है कि मैंने अपने काव्य संकलनों में कभी भूमिका की जरूरत महसूस नहीं की। इसको लेकर एक वरिष्ठ हिन्दी कवि तो यहाँ तक नाराज हो उठे थे कि हम क्या मर गये हैं? खैर! मेरी राय में कविता को पाठक से सीधे संवाद करने दीजिए, आप कौन होते हैं बीच में टांग अड़ाने वाले?

इन दिनों एक बात और मैंने शिद्दत से महसूस की है।

जाने की सुनकर वे फिर चिन्तित हो गये – ''मैंने अखबारों में पढ़ा है कि कोमा वाले मरीज कई बार साल–साल भर होश में नहीं आते। अगर ऐसा हो गया तो ....'' बेटियों ने कहा ''पापा, आप तो अभी से घबरा गये। जरा सोचिए, हमारी माँ ने चालीस साल आपकी सेवा की है, वह भी तब, जब आप स्वस्थ और समर्थ थे। आज वे बीमार पड़ी हैं तो आपका फर्ज है आप इनकी सेवा करें।''

अपनी हृष्ट–पुष्ट बेटियों को देखकर नरोत्तम जी के मन में आया कहें, 'सेवा तो इन्होंने तुम्हारी भी कम नहीं की है बेटियों! चूहे जैसी पैदा हुई थीं तुम दोनों।' पर वे लड़कियों का दिल दुखाना नहीं चाहते थे। वे जानते थे उनके ऊपर गृहस्थी और नौकरी के दोहरे झंझट हैं।

''याद रखिए पापा, हमारी मम्मी के हाथ की छोटी उँगली भी हिलती रहे तो भी उन्हें जिलाए रखना है। हमें अपनी माँ साारे संसार से ज्यादा प्यारी है और कुछ नहीं तो कहने को तो है कि हमारी माँ अभी भी है।'' बड़ी बेटी ने अपनी कीमती काली साड़ी की पटली ठीक करते हुए कहा।

पुराने दिनों के साथियों को खबर लगी तो उनमें से कई आकर मिसेज सहाय को देख गये। सहृदय लोग थे। सबने अपने–अपने फोन नम्बर नरोत्तम जी को दे दिये, जिससे किसी भी जरूरत में वे उनसे सम्पर्क कर सकें। चार–

पाँच दिन में नरोत्तम जी की डायरी फोन नम्बरों से भर गई। एक दिन दो पड़ोसी भी उनसे मिलने आये। मरीज की हालत जैसी की तैसी थी। बस, इतना सुधार था कि वे कभी–कभी अपने बच्चों के नाम अस्फुट स्वर में दोहरातीं।

पड़ोसियों ने बड़ी आत्मीयता से कहा ''सहाय साहब, आपको किसी चीज की जरूरत हो तो बताइए, आप भी यहाँ रहते–रहते बहुत थक गये होंगे।''

हमदर्दी के बोल सुनकर नरोत्तम जी को लगा कि वे वाकई बहुत थक गये हैं। उन्होंने महीनों से कोई मनपसन्द चीज नहीं खाई है। अस्पताल की कैण्टीन के खाने की तरफ उनकी देखने की भी इच्छा नहीं होती थी। उन्होंने बड़े संकोच से कहा ''अगर हो सके तो थोड़ा मीठा दलिया बनवाकर भिजवा देते।''''जरूर जी'' पड़ोसी ने कहा और विदा ली।

अगले दिन सुबह पड़ोसी दफ्तर जाते हुए दो मिनट के लिए अस्पताल आये, लो जी सहाय साहब, इसमें दलिये का सब सामान है। वाइफ ने कहा है उसे दलिया बनाना आता नहीं है, यहाँ कैन्टीन में बनवा लें आप। नरोत्तम जी हक्के–बक्के दलिए, चीनी और दूध के पैकेट देखते रह गये।

पत्नी की चेतना जब–जब लौटती, वह विस्सू विस्सू पुकारतीं। नरोत्तम जी ने एक परिचित से बेटे को फिर फोन करवा दिया।

चार दिन तक वे तनाव में रहे। क्या हुआ। विस्मय

जीवन की एक घटना का इस क्षण स्मरण आ रहा है। बात सन् 1944 की है। हम कुछ मित्रों ने मिलकर मंदसौर नगर में ग्वालियर राज्य का प्रथम प्रगतिशील लेखक सम्मेलन आयोजित किया था। इसमें ग्वालियर से उदयकुमार कौशल तथा वीरेन्द्र मिश्र एवं उज्जैन से नरेन्द्र धीर उपस्थित हुए थे। प्रमुख अतिथि थे उस समय के प्रसिद्ध किसान नेता स्वामी सहजानन्द सरस्वती। इसी मंच से मैंने प्रथम बार सार्वजनिक रूप से कविता पाठ किया था। तब मेरी उम्र मात्र 17 वर्ष थी।

मैं सन् 1951 में इंदौर आया। जिन्दगी मोटर के पहियों से बंधी थी। इसके बावजूद हम सराफा स्थित महेश वाचनालय में प्रगतिशील लेखकों की बैठकें प्रति सप्ताह आयोजित करते थे। सर्वश्री शरद जोशी, रमेश बक्शी, श्याम व्यास, सत्येन्द्र शरत्, रामेश्वर शर्मा, कालिदास मित्तल, कृष्णकान्त दूबे, गणेशदत्त त्रिपाठी तथा रमेश महबूब आदि इन गोष्ठियों में शिरकत करते। यहाँ रचनाओं की प्रशंसा कम, रचनाओं की खिंचाई अधिक होती थी। इससे लेखक के प्रति एक सतर्कता और जिम्मेदारी की भावना को बल मिला।

यहाँ यह उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि प्रगतिवाद के दौरान, जिसका उन दिनों बोल–बाला था। कविता ने नारों की शक्ल अख्तियार कर ली थी। इस माहौल में मैंने प्रकृति के जिरह–बख्तर का उपयोग कर अपनी

है। जीवन यात्रा में मैंने जब भी पराजय का हल्का सा अहसास किया, कविता ने मेरी पीठ थपथाकर हौसला अफजाई की है। डगमगाती किश्ती की पतरवार को उसने खुद आगे बढ़कर थाम लिया है और इस अनुभूति ने मेरे मन के कोने में सहमी, सिमटी बैठी जिजीविषा को नयी ऊर्जा, नयी शक्ति एवं नयी सामर्थ्य से सम्पन्न किया है। जीवन में मेरी अटूट आस्था है और यही कारण है कि कई बार मौत की बांहों के घेरे में घिरने के बाद भी उसे बुत्ता देकर सही सलामत लौट आया हूँ।

हिन्दी कविता ने पिछले तीन–चार दशकों में कई शक्लें अख्तियार कीं, कई लिबास बदले, मुहावरे ढाले, मगर मुझसे अपनी लीक नहीं छोड़ी गयी। शिल्प और भाषा के प्रयोग तो मैंने भी किये, क्योंकि आगे बढ़ने के लिए अपने को तोड़ना भी जरूरी है, मैं ऐसा मानता हूँ। जहाँ तक बन सका लेखकीय मर्यादा और सामाजिक उत्तरदायित्व का वहन अपनी काव्य रचना में एक साथ निभाने की कोशिश की है। इन चालीस वर्षों की सृजनात्मक यात्रा के दौरान मैंने अपनी एक शैली, कहने का एक अंदाज विकसित करने की कोशिश की है। इसलिए आलोचक जब कहते हैं कि यदि मेरी कविता बिना मेरे नाम के भी कहीं प्रकाशित हो जायें तो पाठक यह कह उठेंगे – अरे! यह तो रामविलास शर्मा की रचना है। तो मुझे बहुत आश्वासन मिलता है। जहाँ तक प्रतिबद्धता का प्रश्न है मुझे अपने छात्र

क्यों नहीं आया। कहीं वह खुद तो बीमार नहीं है। उसने कोई खबर क्यों नहीं भेजी। पाँचवें दिन सुबह नौ बजे विस्मय की नीली मारुति वार्ड के सामने आकर रुकी। उनका बेटा, बहू, दोनों पोते कमरे में दाखिल हुए। पीछे–पीछे फलों के थैले लिये हुए ड्राइवर। इन सबके बाद नन्हा पालतू कुत्ता नॉटी।

''मैं तो जापान गया हुआ था कान्फ्रेन्स में। अभी रात दो पैंतालीस पर लौटा। तब डॉली ने बताया मम्मी अस्पताल में हैं।'' डॉली तो आ सकती थी, नरोत्तम जी ने बहू की तरफ देखते हुए सोचा।

शायद डॉली ने उनके मन की बात सुन ली, ''पापा कार गैरेज गयी हुई थी। मैं इतनी परेशान हुई कि पूछिये मत। कहने को दिल्ली इतनी पास है, पर टैक्सी वाले तैयार नहीं होते गाजियाबाद आने को।'' डॉली ने सफाई दी।

सबने अपनी–अपनी तरह से बेहोश माँ को प्यार किया। विस्मय ने माँ का तकिया ठीक करते हुए कहा, ''पापा मम्मी बिल्कुल ठीक हो जाएँगी, देख लेना। विदेश में तो एक लड़की तेईस साल बाद कोमा से एकदम भली–चंगी होकर निकली। कार एक्सीडेंट हुआ था उसका।''

नरोत्तम जी का पोर–पोर थकान से बेजान हो रहा था। डॉली ने उनके लिए सन्तरा छीलकर दिया तो उन्हें लगा उन्हें भी सेवा और आराम की जरूरत है।

दोनों पोते – स्वागत और प्रतीक कुछ देर दादी के

बिस्तर के पास खड़े रहे। जब उनकी आवाज से भी दादी नहीं जागीं तो वे नॉटी को लेकर बाहर निकल गये।

नरोत्तम जी खिड़की से बाहर बच्चों को नॉटी के साथ खेलते देखते रहे। फिर वे बताने लगे कैसे माँ का स्वास्थ्य पिछले कई महीनों से लश्टम–पश्टम तो चल ही रहा था। आधी रात में पेशाब करने उठीं तो बाथरूम में फिसल पड़ी।

''पापा, जब मम्मी इतनी कमजोर थीं तो उनके बिस्तर के पास कमोड क्यों नहीं रखवा दिया आपने?'' डॉली ने कहा।

''इसे गन्दा लगता है। क्या करूँ, पुरानी आदतें हैं, बदली नहीं जातीं।''

''आप भी तो जिद्दी टाइप हैं। आदत से ज्यादा इम्पोर्टेन्ट जरूरत होती है पापा'' विस्मय ने कहा।

नरोत्तम जी को अपनी गलती महसूस हुई। वे बेटे के सामने अपने को अनाड़ी और पुराना पा रहे थे। यों तो वे भी अपने समय में उच्चपदस्थ अधिकारी रहे थे और अपने दफ्तर के शहँशाह, लेकिन बेटे ने अपनी कम्पनी में कुल सात साल में इतनी तरक्की कर ली थी कि उसने न सिर्फ पिता को, बल्कि अपने साथियों को भी बहुत पीछे छोड़ दिया था। आए दिन उसका देश–परदेश का दौरा रहता। महज तीस साल की उम्र में उसके व्यक्तित्व में गजब का आत्मविश्वास था।

बेटे को देख–देख नरोत्तम जी की व्यग्रता शब्द ढूँढ

तलाश नहीं कर लेतीं, आशय को उजागर करने की क्षमता अर्जित नहीं कर लेतीं वह चहना तो दूर कोटर से बाहर तक कभी नहीं झांकती।

पता नहीं क्यों मेरा मन अन्याय के आघारत को बर्दाश्त नहीं कर पाता। मानवता के जिस्म पर यातना की हल्की सी खरोंच मुझे तिलमिला देती है। डबडबाई आँख देखकर मेरा मन ऊभ–चूभ होने लगता है और मिट्टी की परतें भेदकर झांकते निर्झर की तरह मन से कविता बह निकलती है। मानव मन की विभिन्न प्रवृत्तियों का निरूपण भले ही मेरी रचनाओं में स्थलों पर विद्यमान है किन्तु व्यक्ति विशेष पर कविता की रचना करना मेरे स्वभाव में नहीं है।

आपको यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि मैं सोचता भी हूँ तो अनायास आँखों में बिम्ब उतर आते हैं। लगता है सोच बिम्बों पर सवार होकर आया है। प्रकृति के व्यवहार में मुझे आम आदमी के दु:ख–दर्द झलकते दिखाई देते हैं। मनुष्य और उसकी अस्मिता का संघर्ष भी इसी माध्यम से व्यक्त होता है। मेरा विश्वास है कि निजी हो अथवा सामाजिक, हर समस्या का हल प्रकृति के पिटारे में मौजूद है। प्रकृति मेरे लिए सौ रोगों की एक रामबाण दवा है।

आप पूछ सकते हैं कि मैं कविता क्यों लिखता हूँ? मेरा विनम्र उत्तर होगा कि कविता मेरे जीवन संघर्ष का संबल

ढकोसले हों या साम्प्रदायिक खुराफात, स्नेह की शीतल बयार हों या नफरत की आग, प्रकृति इन सबको अपने सांचे में ढालकर एक फरमाँबरदार दोस्त की तरह मेरी खिदमत में पेश कर देती है और इस प्रकार मेरी कविता का जन्म होता है।

जब बताने ही चला हूँ तो आपको एक और राज की बात बता दूँ। कविता रचने के लिए मुझे कसरत नहीं करनी पड़ती। अंतर से जब कविता उमड़ती है तो मेरी आँखों के सामने एक के बाद दूसरा बिम्ब आकर कतार–बद्ध खड़े हो जाते हैं। सहसा दो बिम्ब आपस में टकराते हैं और उनसे एक नया बिम्ब आकार लेता है। यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती है और मैं मजे से उसका जायका लेता रहता हूँ, मूल विचार अथवा विषय के इर्द–गिर्द मंडराती बिम्बों की यह झालर जब उसे अपने में समा लेती है तो एक लड़ बन जाती है और बस, कविता तैयार। मैं मन–ही–मन शब्दों का लिबास धारण किये इन बिम्बों को दोहराता हूँ, जरूरत समझूं तो उन्हें तराशता हूँ, जहाँ झोल महसूस हों वहाँ खूंटियां उमेठकर कसावट लाता हूँ और उसे कागज पर उतार लेता हूँ।

ऐसा भी हुआ है कि कुछ रचनाएं एक झटके में ही लिख जाता हूँ, एकदम स्नेप शॉट की तरह और कुछ दीर्घकाल तक मन की कोठरी में घुमड़ती–घहराती रहती हैं। किसी अधूरे पेंटिंग की भांति। जब तक वे सही शब्दों की

रही थी। कभी वे डॉक्टरों के पर्चे दिखाने लगते, कभी दवाओं की शीशियाँ।

''पापा कोमा पेशेण्ट के साथ सबसे अच्छी बात यह होती है कि हर मिनट की देखभाल नहीं करनी पड़ती। डॉक्टर क्या कहते हैं, कब तक होश आ सकता है?''

''कहते हैं, कभी भी आ सकता है।''

''आप ऐसा कीजिए, अलग से एक नर्स रख लीजिए। आप पर बहुत स्ट्रेन है चौबीसों घण्टे का।''

डॉली ने कहा ''पापा फिर तो आप घर जाकर रिलेक्स भी कर सकते हैं।''

''अकेला घर मुझे काटने को दौड़ता है। क्यों करूँ, मेरी तो अक्ल हैरान है। पन्द्रह दिन से बस मैं हूँ और इसका बिस्तर है। रात में भी ठीक से सो नहीं पाता, कहीं यह गिर न पड़े। बिस्तर ऊँचा है न और यह बीच–बीच में चौंकती है।''

डॉली ने बिस्तर का मुआवना किया, ''ऐसा कीजिए पापा, एक तरफ बिस्तर दीवार से सटा दीजिए, दूसरी तरफ यह जँगला चढ़ दीजिए, बस, हो गयी आपकी परेशानी खत्म।''

नरोत्तम जी इस व्यवस्था पर गौर कर चुके थे, पर उनकी व्यग्रता फिर भी बनी थी, ''वहाँ हवा नहीं लगती ठीक से। फिर दीवार से कोई कीड़ा–वीड़ा बिसतर पर आ जाए...।''

''अब पापा, आपको तो लगता है कि परेशानी में मजा आने लगा है।''

नरोत्तम जी बता रहे थे ''मंगलवार का दिन था। नहीं, इसका ब्लडप्रेशर उस दिन बिल्कुल ठीक था। शाम को ही डॉ. तुली ने घर आकर देखा था हम दोनों को। यह स्लिप न हुई होती तो आज हम अच्छे भले घर पर होते।''

विस्यम बेचैनी से एक बार माँ को, एक बार पिता को देख रहा था।

''मंगल को बड़े चाव से इसने बेसन के लड्डू बनाये थे। कहने लगी, बच्चों को बड़े पसन्द हैं मेरे हाथ के लड्डू।'' थकान उसे तभी आ रही थी। फिर शाम को खाना बनाया। मुझे खिलाया, पर खुद नहीं खाया। कहने लगी, ''मुझे एक प्याला दूध दे दो, मैं सौ जाऊँ।''

''मैंने ग्लूकोज मिलाकर दूध दिया। मैं अकेले बैठा टी.वी. देखता रहा, यह सो गयी।''

''जब इनसे नहीं होते तो इतने झंझट के काम करती क्यों हैं मम्मी?'' डॉली ने कहा।

''शरीर के साथ शौक तो नहीं जाता न। इससे पहले एक दिन डॉक्टर दुबे को दिखाया था। उन्होंने कहा – शरीर में खून की कमी हो गयी है। सारे पेपर्स हैं मेरे पास। एक साल से डॉक्टर दुबे का इलाज चल रहा है, तुम्हें पता ही है।''

''वह सब मैं जानता हूँ, पापा, आप बस नटशैल में बताइए। अब इनकी तबीयत कैसी है, डॉक्टर क्या कहता

सीटें घेरकर पसर जाता है और मैं अपनी पीठ पर कुनकुनी सुबह की गर्म सांसों की ऊष्मा अनुभव करता हूँ। न मैं यात्रा करने से बाज आता हूँ न शामें अपने नटखटपन से।

प्रकृति से मेरा यह दोस्ताना ताल्लुक ऐन बचपन से ही रहा है। मैं मकई, ज्वार के झूमते खेतों की मेड़ों पर नंगे पाँव भटका हूँ, नीम और इमली की डालों से कूदकर कुलाम डाल खेला हूँ, नदियों में जी भरकर तैरा हूँ और कुओं में गंठे लगाये हैं, कच्ची केरियां चुराकर नमक के साथ गटागट उनका कचूमर निगला है, झरबेरियों से जेब भर–भरकर जाली बेर बटोरे हैं, पलाश के केसरिया फूलों को जगाल में गलाकर होली खेली हैं, निम्बोलियों का खटमीठा स्वाद चखा है, फूंकड़े (ज्वार के भुट्टे) भूनकर खाये हैं, और इमली के गदराये दइये चूस–चूसकर संगी–साथियों के साथ आंख मटक्का किया है।

शहरों में सीमेंट के पसरे जंगलों के बीच रहकर भी प्रकति से मेरी बोलचाल और दुआ सलाम निरन्तर बनी रही। सच कहूं तो प्रकृति तो मेरे रक्त के कण–कण में रच–बस गयी है। मैं जब भी अपने आसपास की जिन्दगी का लेखा–जोखा लेता हूँ तो मुझे उससे मिलते–जुलते बिम्ब प्रकृति में सहजता से उपलब्ध हो जाते हैं। वर्ग–संघर्ष हों अथवा पारिवारिक समस्याएँ, शोषण का सवाल हो या अभावों का संत्रास, सामाजिक विसंगतियाँ हों या राजनीतिक प्रवंचनाएं, धार्मिक

पाठ परिचय

मालवा के मनोरम पठारों पर दहकते पलाश हों अथवा खेतों में खिलखिलाते अफीम के रंगारंग फूल, निमाड़ की अनसमतल धरती की रक्षा में तैनात वनस्पति से आच्छादित विंध्या के हरिताभ शिखर हों या सतपुड़ा के ऊँघते, अनमने धूसर जंगल, दंडकारण्य के अंचल में निर्द्वंद्व भटकती महुए की गंध हो या सरगुजा के शाल वलों की, शरारती झोंको को सहलाती, सघन छांह, छत्तीसगढ़ के सुआ पंखी धान के खेत हों या बुंदेलखंड की लोक गीत उगेरती अक्खड़ टोहरियां ये सब मेरी कविताओं के लिए निरन्तर कच्चा माल जुटाते रहे हैं। संभवत: इसी कारण जन–जीवन के विविध आयामों के निसर्ग निहित रूप, रस, गंध के रंगीन रेशों से बुनी कविता मेरा रचना संसार है।

*****

मेरे लिए कविता रचना अपनी आतंरिक अकुलाहट को रूपाकर देना है। इस हेतु न किसी निर्धारित समय, न विशेष स्थान की पाबंदी है। मैंने महसूसे किया है कि यात्राओं के दौरान कविताएं बस की खिड़की से छलांग लगाकर मेरे पहलू में आ बैठती हैं और बतियाने लगती हैं। कभी–कभी तो समूचा हरहराता जंगल, नदी की उंगली थाम बस की तमाम

है?'' विस्मय ने बड़ी बेचैनी से पिता की तरफ देखा।

नरोत्तम जी के कलेजे में बेटे की बेचैनी, हड़बड़ी और शब्द बर्फ की नोक की तरह चुभ गये, ''जो हैं, तुम देख रहे हो। डॉक्टरेां का कहना है, ब्रेन हैमरेज से उठने पर इस फालिज भी हो सकता है। ऐसे में शायद दिमाग उतनी अच्छी तरह काम न करे।''

''आप मम्मी का बुरा क्यों सोचते हैं। अगर मेरी मम्मी हैं तो इन्हें कुछ नहीं होगा। चियर अप पापा, मम्मी ठीक हो जाएँगी, '' विस्मय उठ खड़ा हुआ। डॉली भी खड़ी हो गयी।

''पापा, आप सुबह–शाम मुझे मम्मी की हालत के बारे में फोन करते रहिए। आई मस्ट नौ हाउ शी इज। मुझे कलकत्ते जाना था मीटिंग में। वह मैं पोस्टपोन कर दूँगा। मम्मी के ठीक होने पर ही जाऊँगा।''

डॉली ने कहा ''पापा आप अपना भी ध्यान रखिएगा। यह न हो कि मम्मी के बाद आप पड़ जाएँ।''

''आप कहें तो मैं डॉली को छोड़ जाऊँ?'' विस्मय ने चलते–चलते कहा।

डॉली ने खीझकर पति की तरफ देखा, ''मुझे कल बच्चों के स्कूल जाना है, पेरेण्ट – टीचर मीटिंग है। पिछले महीने भी मैं नहीं जा सकी थी।''

बाहर बच्चे खेल से थककर कार में बैठे थे। नॉटी अब भी बोगनविलिया की नीची डालों को उलाँकने की

कोशिश में उछल–कूद कर रहा था।

''नॉटी चलो।'' डॉली के आवाज लगाते ही वह उछलकर गाड़ी में चढ़ गया।

प्रतीक ने कहा, ''दादाजी मैं दादी माँ के लिए गेट–वेल कार्ड भेजूँगा, ओ.के.।''

कार चली गयी। नरोत्तम जी वापस कमरे में आ गये। पत्नी अर्धचेतन अवस्था में विस्सू को याद कर रही थी। नरोत्तम जी पत्नी से बोले, ''चला गया तुम्हारा विस्सू। आधे घण्टे के लिए आया था। हाँ, तुम्हारा बेटा विस्सू। इसे तुमने पैदा किया, पाला–पोसा। याद है कैसे इसकी जरा नाक बहते ही तुम मेरी नाक में दम कर देती थीं, डॉक्टर को बुलाओ, खिड़की बन्द करो, नया कम्बल लाओ। यह लाट साब सो जाता था, तुम इसका होमवर्क करती थीं, आधी–आधी रात तक। आज तुम बेहोश पड़ी हो और बेटे को फुर्सत नहीं है तुम्हारे पास बैठने की। मुझसे कहता है नटशैल में बताइए मम्मी को क्या हुआ है। बदतमीज, गधा कहीं का। दफ्तर की भाषा अपने बाप से बोलता है। क्या तुम्हारी हालत और अपनी परेशानी मैं नटशैल में बता सकता हूँ। क्या यह हाऊ आर यू, फाइन, थैंक्यू जैसी सिचुएशन है? मैंने भी बहुत अफसरी की, पर कभी अपने बाप को अपने क्लर्क नहीं समझा। ये तुम्हें देखने नहीं, विजिट करने आए थे। जब ये पोते हुए, तुम अपना

6. काव्य यात्रा जारी है

रामविलास शर्मा

लेखक परिचय

जीवन संश्लिष्ट प्रकृति के प्रख्यात और अनूठे कवि, बहुत मिलनसार, फक्कड़ और लाजवाब व्यक्ति रामविलास शर्मा जी (1927–1990) की कविताएँ लगभग पचास वर्षों तक लगभग सभी श्रेष्ठ पत्र–पत्रिकाओं में सम्मान से प्रकाशित हुई हैं। आपकी पहली पुस्तक कविता में सुबह पर मध्यप्रदेश साहित्य परिषद का 1989 का अखिल भारतीय तुलसी पुरस्कार प्रदान किया गया। उसी साल आपको जनधर्म द्वारा मध्यप्रदेश का सबसे बड़ा गैर साहित्यिक सम्मान सारस्वत सम्मान प्रदान किया गया। मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा भी सम्मनित किया गया। हरिशंकर परसाई के शब्दों में ''रामविलास कवि हैं..... हृदय से कवि हैं..... रामविलास की उत्फल्ल और प्राणवान प्रकृति है। वह मानव जीवन का प्रतिबिंबन करती है।''

प्रस्तुत आत्मरचना लेख में सहज कवि रामविलास शर्मा की कविता की अंतरात्मा के तथ्यों का यथार्थ चित्रण द्रष्टव्य है। कवि की मानवीयता तथा वैचारिक प्रतिबद्धता किस प्रकार कविताओं के अंतराल में संव्याप्त हुई उसका विश्लेषण स्वयं कवि द्वारा किया गया है।

अहमद की पुत्रवधु कनखियों से शिवाजी की ओर देखती है। उसकी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। मोरोपंत शिवाजी की तरफ देखता है और आवाजी सोनदेव घबराहट भरी दृष्टि से मोरोपंत की ओर।)

नहाना, खाना भूलकर रात–दिन लगी रहीं इनमें। आज बहू को तुम्हारे लिए वक्त नहीं है। सुना तुमने, किसी को फुर्सत नहीं है तुम्हारे लिए। तुम्हारे बाद मेरा क्या होगा, मैंने अभी से देख लिया। तुम जल्दी से ठीक हो जाओ। देखो, आँखें खोलो। तुम्हारे सिवाय मेरा और है ही कौन?''

(बोलने वाली औरत से)

2. चरित्र संगठन

बाबू गुलाबराय

लेखक परिचय

बाबू गुलाबराय का जन्म संवत 1944 में इटावा में हुआ। आपके पिताश्री भवानीप्रसाद सरकारी कर्मचारी थे। आपके माता–पिता की धार्मिक और दार्शनिक प्रवृत्ति का आप पर विशेष प्रभाव पड़ा। आपने सन् 1913 में दर्शनशास्त्र की एम.ए. परीक्षा पास की। दर्शनशास्त्र पर आपने हिन्दी में कई पुस्तकें लिखी हैं। किन्तु बाद में आपकी रुचि का प्रमुख केन्द्र साहित्य हो गया। आगरा में आप सेंट जॉन्स कॉलेज में अध्यापक नियुक्त हुए। आपने एल.एल.बी. की परीक्षा पास की। आप कई वर्ष तक छतरपुर महाराज के सम्पर्क में रहे। पहले उनके दरबारी रहे, फिर प्राइवेट सेक्रेटरी और बाद में दीवान और चीफ जज भी रहे। महाराज की मृत्यु के पश्चात सं. 1990 में आप फिर आगरा आ गए। आगरा में आप गंभीर रूप से अध्ययन में जुट गए आपने अनेक वर्षों तक साहित्य संदेश का सफल संपादन भी किया।

कर्त्तव्यशास्त्र, तर्कशास्त्र, पाश्चात्य दर्शनों का इतिहास, मैत्री धर्म, बौद्ध धर्म आदि आपकी दार्शनिक रचनाएं

उसका उद्देश्य है? तब.... तब तो ये रक्तपात, ये लूटमार, घृणित कृतियां हैं। शिवा में यदि शील नहीं तो उसके सेनापतियों, सरदारों की शील का स्पर्श तक नहीं हो सकता। फिर तो हम में और इन्द्रियलोलुप लुटेरों तथा डाकुओं में कोई अन्तर ही नहीं रह जाता। अरे, तब तो हमारे जीवन से हमारी मृत्यु, हमारी विजय से हमारी पराजय, कहीं श्रेयस्कर है। (मोरोपंत से) आह! पेशवा यह.... यह मेरे.... मेरे एक सेनापति ने..... मेरे एक सेनापति ने क्या..... क्या कर डाला! लज्जा से मेरा सिर आज पृथ्वी में नहीं, पाताल में घुसा जाता है। इस पाप का न जाने मुझे कैसा..... कैसा प्रायश्चित करना पड़ेगा? (कुछ रुककर) पेशवा, इस समय तो मैं केवल एक घोषणा करता हूँ – भविष्य में अगर कोई ऐसा कार्य करेगा तो उसका सिर उसी समय धड़ से जुदा कर दिया जाएगा।)

(शिवाजी का सिर नीचे झुक जाता है।

क्षति पहुँचाए बिना, मौलवी साहब की सेवा में भेज दिया। हिन्दू होते हुए भी शिवा के लिए इस्लाम धर्म पूज्य है।

इस्लाम के पवित्र स्थान, उसके पवित्र ग्रन्थ सम्मान की वस्तुएं हैं। शिवा हिन्दू और मुसलमान प्रजा में कोई भेद नहीं समझता! अरे! उसकी सेना में मुस्लिम सैनिक तक है। वह देश में हिन्दू राज्य नहीं, सच्चे स्वराज्य की स्थापना चाहता है। अतातायियों से सत्ता का अपहरण कर उदार नेताओं के हाथों में अधिकार देना चाहता है। फिर पर स्त्री – अरे! पर स्त्री तो हरेक के लिए माता के समान है। जो अधिकार प्राप्त जन है, जो सरदार हैं या राजा.... उन्हें तो इस सम्बन्ध में विवेक, सबसे अधिक विवेक रखना आवश्यक है। (कुछ रुककर) आवाजी, क्या तुम मेरी परीक्षा लेना चाहते थे? इसलिए तो तुमने यह कृत्य नहीं की? शिवा ये लड़ाई – झगड़े, ये लूट–पाट व्यक्तिगत सुख के लिए के लिए कर रहा है? क्या स्वयं चैन उड़ाना

हैं। नवरस, प्रसाद जी की कला, काव्य के रूप, सिद्धान्त और अध्ययन, हिन्दी नाट्य विमर्श आदि आपकी अलोचनात्मक रचनाएँ हैं। ढलुआ क्लब, प्रबन्ध प्रभाकर, जीवनपथ, मेरी असफलताएँ, फिर निराशा क्यों, मन की बात आदि संग्रहों में आपके निबन्ध संकलित हैं।

सन् 1963 में चिरकाल रोगग्रस्त रहने के उपरान्त आपने अपना नश्वर शरीर का परित्याग किया।

*****

पाठ परिचय

प्रस्तुत पाठ में मनुष्य जीवन की विशेषताओं के बारे बताया गया है। मनुष्य के चरित्र को ही सबसे महत्वपूर्ण समझा गया है। मनुष्य अगर चरित्रवान है तो उसमें अन्य विशेषताएं विनयशील होना, उदार भाव से दूसरों की सेवा करना, किसी प्रकार के लालच में न आकर अपने कर्त्तव्य को पूरा करना, कठिनाइयों और संकट के समय धैर्य बनाये रखना आदि के बारे में विस्तार से समझा गया है। साथ ही यह भी बताया गया है कि मनुष्य एक सामाजिक जीव है जिसे सहकारिता यानि एक दूसरे के सहयोग के साथ जीवन को आगे बढ़ाना चाहिए। मन में सेवा भाव रखना चाहिए। अपनी बात में सत्यता का प्रयोग करते हुए कही बता को पूरा करना तथा अपना वचन का पालन करने के साथ ही मनुष्य को कर्त्तव्यपरायणता का

मनुष्य के जीवन में कितना महत्व को इस पाठ के माध्यम से समझाया गया है।

*****

मनुष्य विशेषता उसके चरित्र में है। चरित्र के कारण ही एक मनुष्य दूसरे से अधिक आदरणीय समझा जाता है। मनुष्य का आदर उसके पद, धन या विचार के कारण होता है, परन्तु ये सब एक प्रकार से बाहरी हैं, स्थायी नहीं। यदि स्थायी भी हों तो उसके लिए जो आदर होता है, वह भय के कारण। धन का आदर वही करेगा जिसको धनी से कुछ लाभ उठाने की इच्छा हो। विद्या का मान सज्जन अवश्य करते हैं। वह भी जब विद्या विनय एवं चरित्र से युक्त हो। विद्या, धन, बल तथा पद होते हुए भी रावण अपने राक्षसी कर्म के कारण निन्दनीय था। राक्षस साक्षर होकर वन्दनीय नहीं बन जाते।

मनुष्य का मूल्य उसके चरित्र में है। चरित्र में ही उसके आत्मबल का प्रकाश होता है, और यह पता लगता है कि उसकी आत्मा कितनी बलवान है। मनुष्य का चरित्र ही बतलाता है कि वह कितने पानी में है।

यह चरित्र क्या है जो इतनी महत्व रखता है? यह चरित्र उन गुणों का समूह है जो हमारे व्यवहार से सम्बन्ध रखते हैं। दार्शनिक बुद्धि, वैज्ञानिक कौशल, काव्य की प्रतिभा,

आपको देखकर मेरे दिल में एक सिर्फ एक बात उठ रही है – कहीं मेरी माँ में आप की – सी खूबसूरती होती तो मैं भी बदसूरत न होकर एक खूबसूरत शख्स होता। माँ, आपकी खूबसूरती को मैं एक सिर्फ एक काम में ला सकता हूँ – उसका हिन्दू विधि से पूजन करूँ उसकी इस्लामी तरीके से इबादत करूँ। आप जरा भी परेशान न हो। माँ, आपको आराम, इज्जत, हिफाजत और खबरदारी के साथ आपके शौहर के पास पहुंचा दिया जाएगा, बिना देरी के फौरन! (आवाजी सोनदेव की ओर घूमकर आवाजी, तुमने ऐसा काम किया है, जो कदाचित क्षमा ना किया जा सकता। शिवा को जानते हुए, निकट से जानते हुए तुम्हारा साहस ऐसा घृणित कार्य करने के लिए कैसे हुआ। शिवा ने आज पर्यन्त किसी मस्जिद की दीवार में बालबराब दरार भी न आने दी। शिवा को यदि कुरान की पुस्तक मिली जो उसने सिर पर चढ़ा, उसके एक पन्ने को भी किसी प्रकार की

शिवाजी : (भर्राए हुए स्वर में) मेणा को तत्काल इस पड़वी में लाओ।

(आवाजी सोनदेव जल्दी दालान के बाहर जता है। शिवाजी एकटक पालकी की ओर देखते हैं, मोरोपंत शिवाजी की तरफ। कुछ ही क्षणों में पालकी दालान में आती है। ज्यों ही पालकी दालान में रखी जाती है त्यों ही शिवाजी जल्दी से पालकी के निकट पहुँचते हैं। मोरोपंत शिवाजी के पास जाता है।)

शिवाजी : (आवाजी सोनदेव से) खोल दो मेणा, आवाजी।

(आवाजी सोनदेव पालकी के दरवाजे खोलता है। दरवाजे खुलते ही अहमद की पुत्रवधु उसमें से निकल चुपचाप एक ओर सिकुडकर खड़ी हो जाती है। वह परम सुन्दरी युवती है। वेश–भूषा मुगल स्त्रियों के सदृश।)

शिवाजी : (अहमद की पुत्रवधु से) माँ, शिवा अपने सिपहसालार की नामाकूल हरकत पर आपसे मुआफी चाहता है। आह! कैसी अजीबो गरीब खूबसूरती है आपकी।

ये सब वांछनीय है, परन्तु ये हमारे चरित्र से सम्बन्ध नहीं रखते। फिर चरित्र में कौन सी बात आती है? विनय, उदारता, लालच में न पड़ना, धैर्य, सत्य–भाषण, वचन का प्रतिपालक करना और कर्त्तव्य–परायणता, ये सब गुण चरित्र से आते हैं। चरित्र में इन सब बातों के अतिरिक्त और भी बहुत सी बातें हैं, परन्तु ये मुख्य हैं। ये सब गुण प्रायः स्वाभाविक होते हैं, परन्तु अभ्यास से बढ़ाए जाते हैं। अभ्यास में सत्संग से बहुत सहायता मिलती है। अभ्यास के लिए बाल्यकाल ही विशेष उपयुक्त है। यह बाल बनाव का है। बनते समय मनुष्य जैसा बन जाए वैसा ही वह जीवन पर्यन्त रहता है। बाल्यकाल में स्नायु कोमल रहती है तथा वे अन्य संस्कारों से दूषित नहीं होतीं। इस कारण, जो उस काल में अभ्यास डाला जाता है, वह सहज ही में सिद्ध हो जाता है। प्रौढ़ावस्था में अन्य संस्कारों के दृढ़ हो जाने के कारण नये संस्कार कठिनाई से जमते हैं।

मनुष्य जीवन का प्रभात, जिसमें सब प्रकार की शक्तियों का विकास की सम्भावना होती है, विद्यार्थी जीवन में व्यतीत होता है। जो लोग इस विद्याथी जीवन में हमारे पथ प्रदर्शक हैं, उनका परम उत्तरदायित्व है कि यह काल केवल ज्ञान संग्रह में ही न चला जावे। बाल्यावस्था फिर लौटकर नहीं आती। भावी चरित्र निर्माण करने का यही सुअवसर है। विद्यार्थी और शिक्षक अपने–अपने उत्तरदायित्व को समझकर

निम्नलिखित सिद्धान्तों पर ध्यान दें और इनसे विद्यार्थियों में चरित्र संगठन में सहायता लें। यद्यपि ये सिद्धान्त प्राचीन काल से बतलाए जा रहे हैं तथापि इनके प्रचार की आज भी उतनी ही आवश्यक है जितनी प्राचीन काल में थी।

विनय

विनय विद्या का भूषण है। बिना विनय के विद्या शोभा नहीं देती। श्रीमद्भगवद्गीता में ब्राह्मण का विशेषण विद्या विनय सम्पन्न कहा है। जिस विद्या के साथ विनय नहीं है, उससे कोई लाभ नहीं हो सकता। विनय केवल विद्या को ही नहीं वरन धन और बल दोनों को ही शोभा देती है। भृगुजी ने भगवान विष्णु के वक्षस्थल पर लात मारी तो भगवान पूछने लगे कि महाराज! आपके पैर में चोट तो नहीं आई। विनय का क्या यही उत्तम आदर्श है! विनय केवल शिष्टाचार के लिए ही आवश्यक नहीं है, वरन् इससे आत्मा की शुद्धि होती है। विनयशील मनुष्य अभिमान के दोष से बचा रहता है। नम्र भाव दूसरों में प्रेमभाव उत्पन्न करता है और अपने में अपूर्व शान्ति अनुभव कराता है। धन, बल और विद्या के होते हुए भी जो विनय प्रकट करता है और उसको कोई कायर नहीं कह सकता। भयवश विनय आत्मा को गिराती है, किन्तु प्रेम और निरभिमानता की विनय आत्मा का उत्थान करती है।

विनय का अभाव एक प्रकार का खोखलापन प्रकट करता है। जिन लोगों में कोई श्लाघनीय गुण नहीं होता वे

सोना, जवाहरात, न जाने क्या–क्या मिला? मैं तो समझता हूँ श्रीमन्त, केवल दक्षिण ही नहीं, उत्तर की भी विजय इस सम्पदा से हो सकेगी।

शिवाजी : (हम्मालों के पीछे पालकी को देखकर) और उस मेणा में क्या है?

आवाजी सोनदेव : (मुस्कुराते हुए) उस मेणा, उस मेणा में श्रीमन्त, इस विजय का सबसे बड़ा तोहफा है!

शिवाजी : (उत्सुकता से आवाजी सोनदेव की ओर देखते हुए) अर्थात्

आवाजी सोनदेव : श्रीमन्त, कल्याण के सूबेदार अहमद की पुत्रवधू के सौन्दर्य का वृत्त कौन नहीं जानता? उसे भी श्रीमन्त की सेवा के लिए बन्दी करके लाया हूँ।

(शिवाजी की सारी प्रसन्नता एकाएक लुप्त हो जाती है। उनकी भृकुटी चढ़ जाती है और नीचे का होंठ ऊपर के दांतों के नीचे आ जाता है। आवाजी सोनदेव शिवाजी की परिवर्तित मुद्रा देखकर घबरा जाता है। मोरोपंत एकाएक शिवाजी की ओर देखता है। कुछ देर निस्तब्धता रहती है।)

रखते हैं।)

शिवाजी : बैठो आवाजी, कल्याण विजय पर तुम्हें बधाई है।

आवाजी सोनदेव : (बैठते हुए) बधाई है श्रीमन्त सरकार को!

शिवाजी : कहो, पैदल मावलियों ने अधिक वीरता दिखाई या हैटकारियों ने?

आवाजी सोनदेव : दोनों ने ही, श्रीमन्त सरकार!

शिवाजी : और घुड़सवारों में बारगिंरों ने या शिलेदारों ने?

आवाजी सोनदेव : इसमें भी दोनों ने ही, श्रीमन्त।

शिवाजी : सेना के अधिपति कैसे रहे?

आवाजी सोनदेव : पैदल के अधिपति – नायक, हवालदार, जुमलादार और एक हजारी तथा घुड़सवारों के अधिपति – हवालदार, जुमलादार और सूबेदार, सभी का काम प्रशंसनीय रहा, श्रीमन्त सरकार।

शिवाजी : (हम्मालों की ओर देखकर मुस्कराते हुए) कल्याण का खजाना भी लूट लाए, बहुत माल मिला?

आवाजी सोनदेव : हाँ श्रीमन्त, सारा खजाना लूट लिया गया और इतना माल मिला जितना अब तक की किसी लूट में भी न मिला था। चांदी,

अपनी ऐंठ तथा डांट–फटकार से लोगों पर प्रभाव जमाते हैं, किन्तु गुणवानों को इसकी आवश्यकता नहीं। उनका प्रभावस्वतः सिद्ध है। यदि विनयशील मनुष्य का समाज में प्रभाव थोड़ा हो तो विनयशील मनुष्य का दोष नहीं, यह समाज का ही दोष है। इसके अतिरिक्त प्रेम का प्रभाव चाहे थोड़ा हो, पर दबाव के प्रभाव की अपेक्षा यह चिरस्थायी होता है। यद्यपि थोड़ी देर के लिए मान भी लिया जाए कि विनय सब स्थानों में काम नहीं देती जैसे शत्रु के सम्मुख तथापि हमको यह कहना पड़ेगा कि विनयशील पुरुष को ऐसे अवसर कम आएंगे कि उनको अपनी विनय के कारण गौरव हानि का दुखद अनुभव करना पड़े।

इसके अतिरिक्त जीवन में अधिकतर ऐसे अवसर आते हैं जिनमें विनय से सगौरव कार्य साधन हो सकता है। खेद तो इस बात का है कि हम लोग मित्रों और गुरुजनों के साथ भी विनय का व्यवहार नहीं करते। विनय के साथ निरभिमानता, मनुष्य–जाति का आदर सहनशीलता इत्यादि अनेक सद्‌गुण लगे हुए हैं। इसके अभ्यास में इन सब गुणों को अभ्यास हो जाता है।

उदारता

उदारता का अभिप्राय केवल निःसंकोच भाव से किसी को धन दे डालना ही नहीं वरन् दूसरों के प्रति उदार–भाव रखना भी है। उदार पुरुष सदा दूसरों के विचारों का

आदर करता है और समाज में सेवक भाव से रहता है। ''उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्'' में जो उपदेश दिया गया है, वह केवल धन की उदारता नहीं, वरन् उससे प्रेम और सेवा की भी उदारता सम्मिलित है। बहुत से निर्धन भी इस बात को अपनी निर्धनता के गौरव के विरूद्ध समझते हैं कि वे आपकी आर्थिक सहायता लें, किन्तु वे आपके उदारतापूर्ण शब्दों के सदा भूखे रहते हैं।

यह न समझिए कि केवल धन से ही उदारता हो सकती है। सच्ची उदारता इस बात में है कि मनुष्य को मनुष्य समझा जाए, उसके भावों का उतना ही आदर किया जाए जितना अपने का। ऐसे आदर उदारता नहीं है, वरन् कर्तव्य है। प्रत्येक मनुष्य में आदरणीय गुण होते हैं। यह न समझना चाहिए कि धन, विद्या अथवा पद ही आदर का विषय है। गरीब आदमी यदि ईमानदार है तो वह बेईमान धनाढ्य की अपेक्षा कहीं आदरणीय है, क्योंकि गरीबी में ईमानदार रहना और भी कठिन है। गरीब ही हमारे आदर का पात्र हैं। मेहनत करने वालों में एक दैवी प्रभा रहती है जो सदा पूजा योग्य है। जिनको लोग नीच एवं दलित समझते हैं उनके प्रति आदर भाव रखना मनुष्य की आत्मा को सुख तथा शान्ति देता है।

जो लोग अपने साथियों के साथ आदर भाव रखते हैं उनकी भूलों को, उनके हठ तथा बैर को स्वयं उपेक्षापूर्वक क्षमा कर देते हैं, ऐसे लोग परम उदार है। यह उदारता धन की

मोरापंत : (अभिवादन कर) श्रीमन्त सरकार, सेनापति आवाजी सोनदेव कल्याण प्रान्त को जीत, वहां का सारा खजाना लूट कर आ गए हैं।

शिवाजी : (चौंककर) अच्छा! (मोरोपंत की ओर देखकर) बैठो पेशवा, बड़ा शुभ संवाद लाए! आवाजी सोनदेव है कहाँ?

मोरोपंत : (वीरासन से बैठकर) श्रीमन्त की सेवा में अभी उपस्थित हो रहे हैं।

(कुछ निस्तब्धता। शिवाजी और मोरोपंत दोनों उत्सुकता से बायीं ओर देखते हैं। कुछ ही देर में आवाजी सोनदेव बायीं ओर से आता हुआ दिखाई देता है। उसके पीछे हम्मालों का एक बड़ा झुंड भी है। हर हम्माल के सिर पर एक हारा (बड़ा भारी टोकना) है। हम्मालों के झुंड के पीछे पालकी है। पालकी बन्द है। आवाजी सोनदेव भी अधेड़ अवस्था का ऊँचा पूरा मनुष्य है। वेश–भूषा मोरोपंत के सदृश है। आवाजी सोनदेव दालान में आकर शिवाजी का अभिवादन करता है। हम्मालों का झुंड पालकी दालान के बाहर

(दाहिनी ओर दालान का कुछ हिस्सा दिखाई देता है। दालान की छत पत्थर के खम्भों पर है। इसके पीछे की दीवार भी पत्थर की ही है। दालान के पीछे की ओर दाहिनी तरफ, दूर पर, गढ़ की फसील और कुछ बुर्जियां दीख पड़ती है। बायीं तरफ सह्याद्रि – पर्वतमाला की शिखरावली दुष्टिगोचर होती है। कुछ शिखरों की ओट में सूर्य अस्त हो रहा है, जिसके प्रकाश से सारा दृश्य आलोकित है। दालान के सामने, भगवा रंग का मराइा झंडा फहरा रहा है। दालान में जाजम बिछी है, उस पर किमख्वाब की गद्दी पर मसनद के सहारे शिवाजी बीरासन से किसी विचार में मग्न है। उनके शरीर और वेशभूषा के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना इसलिए निरर्थक है कि एक भी भारतीय ऐना नहीं जो उनसे परिचित न हो। दालान के बाहर शस्त्रों से सुसज्जित दो मावली शरीर – रक्षक खड़े हुए हैं। बायीं और से मोरोपंत पिंगले का प्रवेश। मोरोपंत अधेड़ अवस्था की गेहुंए वर्ण का ऊँचा पूरा व्यक्ति है। वेशभूषा शिवाजी से मिलती–जुलती है, केवल सिर की पगड़ी में अन्तर है। मोरोपंत की पगड़ी शिवाजी की पगड़ी से सदृश्य मुगल ढंग की न होकर मराठी तर्ज की है, उनके मस्तक पर त्रिपुण्ड भी है।)

उदारता की अपेक्षा कठिनतर है तथा उसी अनुपात में अधिकश्लाघनीय भी है। धन की उदारता के साथ सबसे बड़ी एक और उदारता की आवश्यकता है। वह यह कि उपकृत के प्रति किसी प्रकार का अहसान न बताया जाए। अहसान दिखाना उपकृत को नीचा दिखाना है। अहसान जताकर करना है। इसीलिए अपने वहाँ गुप्तदान का बड़ा महत्व माना गया है।

लालच में न पड़ना

मनुष्य जितना ही बलवान माना गया है, उतना ही कमजोर भी। जरा से अविचार में मनुष्य का पतन हो जाता है और वर्षों का तप धूल में मिल जाता है। लालच केवल धन का ही नहीं, वरन् हर प्रकार का होता है। लालच इसलिए दिया जाता है कि मनुष्य स्वकर्तव्य से छुट जाए। किन्तु मनुष्य की श्रेष्ठता इसी में है कि वह न्याय पथ से न हटे। महाराज दिलीप को हर प्रकार का लालच दिया गया, किन्तु वे कर्तव्य से न हटे। प्राप्त वस्तु के त्याग से, अप्राप्त परन्तु प्राप्य वस्तु का त्याग अधिक कठिन है।

यद्यपि लालच के सुलभ प्रसंग होते हुए लालच के ऊपर विजय पाने में बहादुरी है, तथापि विज्ञ पुरुष को यही चाहिए कि वह लालच से दूर रहे। ईसाई लोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। ''यायीशु! मुझे इम्तहान में मत डाल।'' जहां तक हो,

थोड़े से भी लालच से बचने का प्रयास किया जाए। जो लोग थोड़े लालच पर विजय नहीं पा सकते, वे बड़े लालच से किस प्रकार बच सकते हैं? हमारे यहां भगवान श्री रामचन्द्र का ज्वलन्त उदाहरण मौजूद है। उन्होंने साम्राज्य का लालच छोड़ा पर कर्त्तव्य से विमुख न हुए। यदि वे जरा ढील डालते तो महाराजा दशरथ तुरन्त अपने विचार से फिर जाते।

यद्यपि लालच में पड़ जाने का उदाहरण विश्वामित्र आदि हैं। तथापि उसके साथ भीष्म आदि के उपाख्यान में हमारे आदर्श मौजूद हैं। जो लोग लालच से बच सकते हैं, अपनी इच्छाओं को रोक सकते हैं, वे ही शक्ति सम्पन्न और प्रभावशाली बनने में समर्थ होते हैं।

धैर्य

कठिनाइयों में चित्त को स्थिर रखना धैर्य कहलाता है। मनुष्य का जीवन पथ कंटकाकीर्ण है। मनुष्य जीवन में कठिनाइयां ही कठिनाइयां है किन्तु उनका सामना ज्ञानी लोग ज्ञान से करते हैं, मूर्ख लोग रोकर करते हैं। कठिन से कठिन स्थिति में प्रसन्न रहना आत्मा की उच्चता का सूचक है। हमको अपनी आध्यात्मिकता का गौरव होना चाहिए। कठिनाइयां प्राय: बाह्य होती है। यदि हम उन पर विजय पा लें तो अच्छा ही है और विजय न पा सकें तो उनसे दबकर दु:खी होना कायरता है। कठिनाइयों में दु:खी होने से वे बढ़ती ही है, घटती नहीं। हमको अपनी शक्तियों से निराश न होना चाहिए।

के दर्शन होते हैं वहीं उनके हृदय के कोमल पक्ष एवं शील के दर्शन होते हैं। परायी स्त्री को माँ की दृष्टि से देखना भारतीय संस्कृति के सच्चे स्वरूप को दर्शाती है। शिवाजी इस आदर्श भावना से प्रेरित होकर अहमद की पुत्रवधु में माँ का रूप देखते हैं। एक आदर्श राजा की पहचान इससे अधिक क्या हो सकती है? शिवाजी यद्यपि वीर हृदय रखते थे राज्यों पर आक्रमण भी करते थे लेकिन शील के मामले में कोई समझौता नहीं करते। आज भी शिवाजी के पद चिन्हों पर चलकर आदर्श शासक भारत की संस्कृति को बनाये रख सकते हैं।

*****

नाटक के पात्र

शिवाजी	:	प्रसिद्ध मराठा वीर
मोरोपंत पिंगले	:	पेशवा
आवाजी सोनदेव	:	शिवाजी का एक सेनापति

स्थान

राजगढ़ दुर्ग का एक दालान

काल

सन् 1648 ई. संध्या

– पंचभूत, एकादशी, स्पर्धा, सप्त रश्मि अष्टदल आदि।

*****

पाठ परिचय

'शिवाजी का सच्चा स्वरूप' एक आदर्श परक एकांकी है। जननायक शिवाजी के सच्चे स्वरूप को एकांकी के माध्यम से उपस्थित किया गया है। शिवाजी के सेनापति आवाजी सोनदेय कल्याण प्रान्त को जीत वहाँ का सारा खजाना लूटकर लाते हैं। साथ में लाते हैं एक पालकी भी। शिवाजी के पूछे जाने पर कि उस पालकी में क्या है? सोनदेव उसे इस विजय का सबसे बड़ा तोहफा बताते हैं। वास्तव में सोनदेव सूबेदार अहमद की पुत्रवधू को बन्दी बनाकर लाता है। शिवाजी उस पालकी के दरवाजे को खोलने का आदेश देता है और अहमद की पुत्रवधू को माँ कहकर संबोधित करता है और उसे आश्वासन देता है कि पूरे इज्जत और हिफाजत के साथ उसके पति के पास पहुँचा दिया जायेगा। साथ ही आवाजी के कृत्य को अक्षम्य घोषित करते हैं। शिवाजी यह भी स्पष्ट कर देते हैं कि अगर हममें शील न हो तो जीवन से मृतयु और विजय से पराजय अधिक श्रेष्ठ है। अपने सेनापति के उस घृणित कार्य पर शिवाजी का हृदय पश्चाताप से भर उठता है और वे यह भी स्पष्ट कर देते हैं कि अगर कोई भविष्य में इस प्रकार के कृत्य करेगा तो उसे मौत की सजा सुनाई जायेगी। एकांकी में जहाँ एक ओर शिवाजी के वीर रूप

कठिनाइयों से दु:खित न होना ही उन पर विजय पाना है। कठिनाइयों में दु:खित न होना अपने विपक्षियों की जीत स्वीकार करना है। राजा हरिश्चन्द्र धैर्य के एक ज्वलंत उदाहरण हैं। श्री रामचन्द्रजी के लिए कहा जाता है कि राज्याभिषेक के कारण उनको हर्ष नहीं हुआ और बनवास में म्लानमुख नहीं हुए। इसीसे वे जगद्वन्दनीय हो रहे हैं।

सहकारिता

यद्यपि सहकारिता के लाभ प्रत्यक्ष हैं, तथापि कुछ लोग असहकारिता में ही अपना गौरव मानते हैं। लोगों का यह भ्रम है कि सहकारिता में हम अपनी न्यूनता स्वीकार करते हैं। मनुष्य सामाजिक जीव है। उसका अकेले काम चलना अत्यन्त कठिन हो जाएगा। हम नहीं जानते कि हम भी दूसरों की सहकारिता से कितना लाभ उठाते हैं। स्वयं अपनी सहकारिता से दूसरों को वंचित रखना कृतघ्नता है। सहकारिता में मनुष्य की एकता एवं समाज की स्थिति का मूल है। सहकारिता को चरित्र के भीतर इसलिए रखा है कि उसमें एक प्रकार का वृथाभिमान त्यागना पड़ता है।

सत्य बोलना और वचन का पालन करना

यद्यपि सत्य बोलना सबसे सहज बात है, क्योंकि उसमें नमक–मिर्च के लिए बुद्धि का प्रयोग नहीं करना पड़ता, तथापि सत्य बोलने के लिए बड़े आध्यात्मिक बल की

आवश्यकता है। जहाँ तक हो, अप्रिय सत्य न बोला जाए किन्तु जहाँ अप्रिय सत्य न बोलने से समाज के हित की हानि होती है, वहाँ उसको प्रियता के लिए दबाना पाप है। चरित्रवान पुरुष को अपनी आत्मा में इतना बल रखना चाहिए कि वह सत्य को निर्भयता के साथ कह सके। सत्य मनसा–वाचा–कर्मणा होना चाहिए। जो कहे वही करे और जो कर सके वही कहे, तथा कहकर फिर न हटे – ''प्रान जाहिं बरु बचन न जाई'' का आदर्श अपने सामने रखे। इसका अर्थ यह नहीं है कि हटवाद करे, किन्तु जब तक वह एक बात को सत्य समझे, उस पर दृढ़ रहे।

कर्त्तव्यपरायणता

सत्य के अतिरिक्त कर्त्तव्य में और भी बहुत सी बातें आती हैं, अतः शेष में एक व्यापक बात रख दी गई। यद्यपि यह कहना कठिन है कि कर्त्तव्य क्या है, तथापि मोटी रीति से सब लोग अपना–अपना कर्त्तव्य जानते हैं। जो बातें बचने की हैं उनसे बचना चाहिए, और जो करने की है उनको सौ हानि उठाकर भी करना चाहिए। बस यही कर्त्तव्यपरायणता है। अपने कर्त्तव्य में शैथिल्य न डालना चाहिए। जहाँ जरा–सा छिद्र हुआ वहां समझना ाहिए कि पतन का द्वार खुल गया।

कर्त्तव्य वह नहीं जो केवल कागज पर लिखा हो। प्रत्येक स्थिति मे अनुकूल अपना कर्त्तव्य निश्चित कर हमको

5. शिवाजी का सच्चा स्वरूप

सेठ गोविन्ददास

लेखक परिचय

हिन्दी एकांकी साहित्य में सेठ गोविन्ददासजी का विशिष्ट स्थान है। गोविन्ददास जी का जन्म मध्यप्रदेश में सन् 1896 ई. में हुआ। ब्रिटिश साम्राज्य की दासता में जकड़े हुए देश की दारुण स्थिति को उन्होंने देखा और उनका हृदय स्वतंत्रता की भावना से आप्लावित हो उठा। उन्होंने गांधीजी के असहयोग आंदोलन में सक्रिय भाग लिया। राजनीति के सक्रिय सैनिक होने के साथ ही सेठ जी के भावुक और संवेदनशील मन में साहित्य के प्रति रूझान उत्पन्न हुआ। फलतः अपनी राजनीतिक एवं सामाजिक भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए साहित्य को माध्यम बनाया। उन्होंने ऐतिहासिक, सामाजिक, समस्यात्मक और विचारातमक एकांकी एवं प्रहसन लिखे हैं। गोविन्ददासजी भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रीयता के उपासक हैं। उनके एकांकी के माध्यम से युग के अनुरूप नया संदेश मिलता है। समाज में फैली हुई रुढ़ियों, पाखण्ड, आडम्बर, दुर्व्यवहार, जातिवर्ण भेद आदि कुरीतियों पर सेठजी ने कड़ा प्रहार किया है।

रचनाएं : सेठ गोविन्ददास के प्रमुख एकांकी संग्रह हैं

उत्सुक थे, परन्तु मुझसे यह सुनकर कि मेरी यात्रा सफलता मेरे मन पर निर्भर है, मौन ही रहे। उन्होंने मुझे प्रसाद दिया और मैंने उनके आतिथ्य के बदले में कुछ उन्हें अर्पण किया। केवल उनसे स्वर्ग के लिए प्रवेश पत्र लेना मुझे स्वीकार नहीं था। बँगले में लौटकर कैमरे का कुछ दुरुपयोग–सदुपयोग किया। फिर नारायणदत्तजी से मिलकर उनके आतिथ्य के बदले में कुछ भेंट देनी चाही। परन्तु उन्हें तो भगवान के मन्दिर में रहने का सौभाग्य प्राप्त नहीं था, जो लक्ष्मी की चरण सेवा करना जानते। वे हमारी श्रद्धांजलि से ही सन्तुष्ठ हो गये।

बदरीनाथ हमारा ऐतिहासिक तीर्थ स्थान है, परन्तु असंख्य यात्रियों में से दो–चार ने भी कभी इसकी दुर्व्यवस्था के कारणों पर विचार किया होगा, ऐसा विश्वास नहीं होता। ग्राम गन्दा है , मन्दिर टूटा जा रहा है और तप्त कुण्ड की ओर अलख नन्दा की धारा बढ़ती आ रही है। सम्भव है, किसी दिन यह पवित्र और ऐतिहासिक नगरी केवल पुरातत्ववेत्ताओं की खोज का विषय रह जावे।

(क्षणदा से)

उसके सम्पादन में आरूढ़ रहना चाहिए। हमको केवल कर्त्तव्य ही नहीं वरन् अपने कर्त्तव्य से भी अधिक करने के लिए तैयार रहना चाहिए। अपना पाठ याद करना हमारा कर्त्तव्य है, किन्तु सामने के घर में आग लग रहीं हो तो पाठ याद करने की अपेक्षा आग बुझाना ही हमारा कर्त्तव्य है। वास्तव में जो कुछ हमें करना चाहिए वही हमारा कर्त्तव्य है।

जिस काम को तुम कर सकते हो – फिर चाहे वह दूसरे के करने का ही हो और यदि तुम देखो कि तुम्हारे न करने से दूसरे के हित की हानि होती है तो उसको करना अपना परम कर्त्तव्य समझो। जो तुम्हारा कर्त्तव्य है उससे कदापि न हटो उसमें चाहे लोग निन्दा करें चाहे स्तुति। कर्त्तव्य के पालन से ही हमारा आत्म गौरव रह सकता है। आलस्यवश या लोभवश कर्त्तव्य से च्युत होना ही हमारा पतन है। कर्त्तव्य पालन के लिए प्रतिक्षण अभ्यास का अवसर है। इस अभ्यास को करते रहने से ही हमारी आत्मा शुद्ध एवं पवित्र बनकर उन्नत हो जाएगी। हम अपनी उन्नति आप ही कर सकते हैं। आत्मा का उद्धार आत्मा से ही होता है।

3. ईमानदारों के सम्मेलन में

हरिशंकर परसाई

लेखक परिचय

जन्म : 22 अगस्त 1924 ई. जमानी (इटारसी)
निधन : 8 अगस्त 1995 ई. जबलपुर, मध्यप्रदेश

नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. करने के बाद वे बगैर किसी नौकरी के स्वतन्त्र लेखन करते रहे। वे अनेक पत्र–पत्रिकाओं में नियमित स्तम्भ और फुटकर लेख आजीवन लिखते रहे। नयी दुनिया, नयी कहानियों और कल्पना के नियमित कालम से काफी प्रसिद्धि मिली। वसुधा का आजीवन सम्पादन करते रहे। परसाई ने हिन्दी व्यंग को प्रतिष्ठा दिलाई। वे हिन्दी के श्रेष्ठ व्यंगकार हैं। उपन्यास और कहानियाँ भी लिखी हैं पर प्रतिष्ठा व्यंग से ही मिली है। उनकी रचनावली कई खंडों में प्रकाशित हो चुकी है। कबीर की तरह सामाजिक स्वास्थ्य की चिंता के कारण उद्‌घाटन प्रियता उनका गुण था। विकलांग श्रद्धा के दौर पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। वे प्रगतिशील लेखक संघ के सक्रिय सदस्य रहे। सोद्देश्य नैतिकता उनके व्यंग के श्रेष्ठतम गुण हैं। भूत के पांव पीछे, बेइमानी की परत, वैष्णव की फिसलन, शिकायत मुझे भी है और सदाचार का ताबीज उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं।

को अन्तर्द्वार की रक्षा करते देखकर हमारे विस्मय की सीमा नहीं रही। वे भी वस्त्रों को आदर की दृष्टि से देखते थे और दीन स्त्री–पुरुषों को हाथ पकड़–पकड़कर रोक देते थे। उस द्वार को भी पार कर नर नारायण की मूक प्रतिमा देखी, जिस पर न हर्ष था न विषाद, न कभी कुछ होने की आशा ही थी। केवल उनके पुजारी की आँखें हर्ष से नाच रही थीं, वे दोनों हाथों से चढ़ावे के थाल से चाँदी की राशि बटोर रहे थे। भगवान के लिए नहीं, परन्तु उनके पुजारी की प्रसन्नता के लिए मैंने भी रजत खण्ड चढ़ाकर विषण्ण मुख से विदा ली।

दूसरे दिन हमने निकटवर्ती चाँदी के पहाड़ पर चढ़ना आरम्भ किया, जिसमें बड़ा आनन्द आया। कहीं–कहीं बर्फ जमकर ऐसी हो गयी थी कि संगमरमर का भ्रम हो जाता था। न वह लगता था और न कुछ विशेष ठण्डा लगता था। उससे ठण्डा तो अलकनन्दा का जल था, जिसमें हाथ डालते ही उँगलियाँ ऐंठ जाती थीं। हवा में कुछ विशेष सर्दी नहीं मालूम हुई। मुझे तो गर्म कपड़े भी नहीं पहनने पड़े। जहाँ बर्फ पिघल रही थीं, वहाँ से खोदकर कुछ बर्फ खायी और कुछ के गोले बनाकर लाये।

तीसरे दिन प्रस्थान के समय फिर मन्दिर में जाकर फूलों की माला न मिलने के कारण जंगली तुलसी के पत्तों की माला चढ़ाकर विदा हुए। पण्डाजी सुफल बोलने के लिए

प्रबन्ध है, न भोजन का। फलतः अधिकांश यात्री रोगी होकर लौटते हैं और कुछ मार्ग में ही परमधाम चल देते हैं।

उस दिन हम लोग दो मील दूर उस मन्दिर को देखने गये, जो द्रौपदी के गलने के स्थान पर उसकी स्मृति में बनाया गया है। यहाँ से थोड़ी ही दूर पर दो पर्वतों के बीच से निकलती हुई वसुधारा की पतली धार दिखाई दी जो दूर से बादलों से छनकर आती हुई किरणों की तरह जान पड़ती थी। उसी के पास व्यास गुफा और तिब्बत जाने का मार्ग है और वहीं तिब्बती लोगों के एक ग्राम का भग्नावशेष है, जिसमें अब भी कुछ लोग आते–जाते दृष्टिगोचर हो जाते हैं।

बदरीनाथ पुरी में देखने योग्य वस्तुओं में मन्दिर और अलकनन्दा के बीच में एक बहुत उष्ण जल का और एक ठण्डे जल का सोता है। वहीं एक कुण्ड बना दिया गया है, दोनों स्रोतों का जल मिलाकर यात्रियों को स्नान कराया जाता है। सम्भव है यही तप्त कुण्ड इस स्थान की प्रसिद्धि का कारण हो।

मन्दिर अपनी प्रसिद्धि के अनुरूप नहीं है और भीतर द्वारों पर कठघरे से लगाकर मानो भगवान को भी बन्धन में डाल दिया है। द्वारपाल उन्हीं को सरलता से प्रवेश करने देते हैं, जो वेशभूषा से सम्भ्रान्त व्यक्ति जान पड़ते हैं। और मलिन वेश वाले दरिद्र, घण्टों सतृष्ण दृष्टि से उन जाने–आने वालों को देखते रहते हैं। भीतर जाकर लाल पगड़ी वाले सिपाहियों

संकलित व्यंग विकलांग श्रद्धा का दौर पुस्तक से लिया गया है। जिस दौर को ध्यान में रखकर इस संकलन के व्यंग लिखे गये हैं वह 1875 ई। से 1979 ई. की अवधि है। इसे उन्होंने मूल्यों की गिरावट और विकलांक श्रद्धा का दौर कहा है। ईमानदारों के सम्मेलन में एक कल्पित कथा के माध्यम से लगभग जातक शैली में तत्कालीन संस्थानों तथा प्रतिष्ठानों की वास्तविकता का संकेत किया गया है। इसमें एक प्रकार के पाखण्ड का पर्दाफाश किया गया है। हल्के हास्य के माध्यम से गहरी सामाजिक चिंता का संकेत इसी निबन्ध का नहीं अच्छे व्यंग मात्र का गुण है।

*****

पाठ परिचय

लेखक इस पाठ के माध्यम से ईमानदारी पर व्यंग्य करते हुए बेईमानी और चोरियों के बारे में बताना चाहते हैं। आज ईमानदारी का दिखावा करने वाले स्वयं कितने बड़े चोर और बेईमान हैं। यही इस पाठ के माध्यम से समझाने की कोशिश लेखक ने की है। कि वे स्वयं बेईमान होकर एक ईमानदार लोगों के सम्मेलने में अतिथि के रूप में जाते हैं और वहाँ देखते हैं कि उनकी स्वयं की वस्तुएं भी चोरी हो जाती हैं। जब कि लेखक स्वयं यही सोच कर जाते हैं कि वहाँ जाने से कुछ बेईमानी का पैसा मिल जायेगा।

*****

मैं हलफिया कहता हूँ, मैं बिल्कुल बेकसूर हूँ। मैंने कतई ऐसा कुछ नहीं किया, जिससे ईमानदार माना जाऊँ। न जाने उन्हें कैसे यह भ्रम हो गया कि मैं ईमानदार हूँ। मुझे पत्र मिला ''हम लोग इस शहर में एक ईमानदार सम्मेलन कर रहे हैं। आप देश के प्रसिद्ध ईमानदार हैं। हमारी प्रार्थना है कि आप इस सम्मेलन का उद्घाटन करें। दो दिन ईमानदारी पर गोष्ठियाँ भी हैं। आप कृपा कर पहली गोष्ठी की अध्यक्षता करें तथा दूसरी गोष्ठियों की चर्चाओं में भाग लें। हम आपको आने–जाने का पहले दर्जे का किराया देंगे तथा आवास, भोजन आदि की उत्तम व्यवस्था करेंगे। आप जानते हैं, इस समय देश में बड़ी तेजी से सामाजिक परिवर्तन हो रहे हैं। इस समय देशवासियों में ईमानदारी की चेतना जगाना बहुत जरूरी है। इस दृष्टि से यह सम्मेलन राष्ट्रीय महत्व का होगा। आपके आगमन में ईमानदारों तथा उदीयमान ईमानदारों को बड़ी प्रेरणा मिलेगी।''

जब ईमानदारी लद ही गयी तो मैं गया। लेकिन फिर हलफिया कहता हूँ कि ईमानदारी के लिए नहीं गया। ईमान से मुझे कुछ लेना–देना नहीं है। मैं यह हिसाब लगाकर गया –

दूसरे दर्जे में जाऊँगा और पहले दर्जे का किराया लूँगा। इस तरह एक सौ पचास रुपये बचेंगे। फिर चाय, नाश्ता, भोजन तीन दिन मुफ्त में होगा, पानी के लगभग तीस

की एक छोटी लकड़ी के हिसाब से लकड़ियाँ मँगाकर भोजन की व्यवस्था की गयी। कदाचित इस महँगेपन के कारण ही बदरीनाथ में यात्रियों के स्वयं भोजन न बनाकर पण्डे के यहाँ या बाजार में भोजन का प्रबन्ध करने की प्रथा है। इस प्रथा का अनुकरण करने के कारण पुरी में ठहरने वाले हमारे साथी इतने अस्वस्थ हो गये कि दूसरे दिन उन्हें उसे छोड़ देना पड़ा।

उस दिन तीसरे पहर तक उन रुपहले शिखरों को मन भरकर देखने के उपरान्त अलकनन्दा का छोटा–सा पुल पार करके हम सब पुरी देखने निकले, परन्तु देखकर केवल निराशा हुई। संकीर्ण गलियाँ और घर दुर्गन्धपूर्ण और गन्दे थे। देखकर सोचा कि जब हम इतने बड़े तीर्थ स्थान को भी स्वच्छ और सुन्दर नहीं रख सकते, तब किसी और स्थान को स्वच्छ रखने की आशा तो दुराशा मात्र है। उत्तुंग स्वर्ग के चरणों से ही नरक की अतल गहराई बँधी है। इसका प्रमाण ऐसे ही स्थानों में मिल सकता है। जहाँ पुण्य–पाप, पवित्रता–मलिनता और करुणा–क्रूरता के एक–दूसरे में जीने वाले द्वन्द्व प्रत्यक्ष आ जाते हैं।

असंख्य गण्यमान्य और नगण्य, धनी और दरिद्र, शक्ति–सम्पन्न और दुर्बल, सपरिजन और एकाकी यात्री यहाँ प्रतिवर्ष जाते–आते हैं। धनिकों के सारे अभाव तो उनका धन दूर कर देता है, परन्तु दरिद्रों के लिए न रहने का अच्छा

नारायणदत्तजी ने फूलों से सजा हुआ एक सुन्दर बंगला बनवा रखा है, जिसमें कभी–कभी कोई सम्भ्रान्त व्यक्ति ठहर जाता है परन्तु प्रायः उसकी दीवारों को पथिकों का दर्शन दुर्लभ रहता है। पक्के तीर्थ यात्री तो पण्डे के संकीर्ण घर में भेड़–बकरियों की तरह भरे रहने में ही पुण्य की प्राप्ति समझते हैं।

नारायणजी ऐसे विदेह गृहस्थ हैं, जो अपनी साधना का फल औरों को समर्पण कर देने में ही सिद्धि समझते हैं। बदरीनाथ ऐसे स्थान में उन्होंने बाग लगाया है, फलों के पेड़ लगाये हैं, आलू की खेती आरम्भ की है और न जाने कितने उपयोगी कार्य किये हैं। इतनी वृद्धावस्था में भी दिन–दिन भर धूप में उन्हें काम करते और कराते देखकर हमें बड़ा विस्मय हुआ।

फूलों के निकट रहने की इच्छा से, एकान्त के आकर्षण से और अपने स्वभाव के कारण मैंने वहीं ठहरने का निश्चय किया, परन्तु हमारे सहयात्रियों में जो एक–दो सच्चे तीर्थयात्री थी, वे उसी समय अपने पण्डे का आतिथ्य स्वीकार करने चले गये। पण्डाजी हमें भी बुलाने आये और उनकी नम्रता और उनका शील देखकर मेरा पण्डों के प्रति उपेक्षा भाव तो दूर हो गया, परन्तु वह स्थान इतना रमणीक था कि उसे छोड़ने की कल्पना भी अच्छी नहीं लगी।

वहीं रुपये सेर दूध, रुपये सेर आटा और एक आने

रुपये हुए। इस तरह एक सौ अस्सी रुपये नकद कमाई होगी। यह बेईमानी कहलायेगी। पर उन लोगों ने मुझे राष्ट्रीय स्तर का ईमानदान मानाा ही क्यों? माना हुआ ईमानदार बेईमानी न करे, तो वह दो कौड़ी का ईमानदार हुआ।

स्टेशन पर मेरा खूब स्वागत हुआ। लगभग दस बड़ी फूल–मालाएं पहनायी गयीं। सोचा, आसपास कोई माली होता तो फूल मालाएँ भी बेच लेता।

मुझे होटल के एक बड़े कमरे में ठहराया गया। उसमें तीन बिस्तर थे। मजबूत ताला वे आयोजक खुद ले आये थे। होटल के ताले का क्या भरोसा और सम्मेलन था ईमानदारों का। सच्चा ईमानदार वह होता है जो सबको बेईमान मानकर चले। मेरे कमरे के बायें और सामने दो हाल थी, जिनमें लगभग तीस–पैंतीस प्रतिनिधि ठहरे थे। मेरे दो ईमानदार साथ भी मेरे ही कमरे में आ गये। बिस्तर तीन थे ही। मैंने सोचा ताला लगाया जायेगा, तो इन्हें तकलीफ होगी। मैंने ताला नहीं लगाया।

सम्मेलन ईमानदारों का था, तो ताला क्यों लगाया जाये? मैंने देखा है चोरों के सम्मेलन तक में ताला नहीं लगाया जाता। चोर अपने चोर बन्धु की चोरी नहीं करता।

उद्घाटन शानदार हुआ। मैंने लगभग एक घंटे तक ऐसा अच्छा भाषण दिया कि मुझे अभी तक शर्म आ रही है।

लोग जा चुके थे। मैं था मुख्य अतिथि। मुझसे लोग

बातें कर रहे थे। मैं चलने लगा, तो चप्पल पहनने गया। देखा, मेरी चप्पलें गायब थीं। नयी और अच्छी चप्पलें थीं। अब वहाँ एक जोड़ी फटी–पुरानी चप्पलें बची थीं। मैंने उन्हें ही पहन लिया। यह बात फैल गयी कि मेरी नयी चप्पलें कोई पहन गया।

एक ईमानदार डेलीगेट मेरे कमरे में आये। कहने लगे ''क्या आपकी चप्पलें कोई पहन गया?''

मैंने कहा, ''हाँ, इतने बड़े जलसे में चप्पलों की अदला–बदली हो ही जाती है।'' फिर मैंनेध्यान से देखा, उनके पाँवों में मेरी ही चप्पलें थीं। वह भी मेरी चप्पलें देख रहे थे। वे बहुत करके उनकी ही थीं।

पर वह बेहिचक मुझे समझाने लगे, ''देखिए, चप्पलें एक जगह नहीं उतारना चाहिए। एक चप्पल यहाँ उतारिये, तो दूसरी दस फीट दूर। तब चप्पलें चोरी नहीं जातीं। एक ही जगह जोड़ी होगी, तो कोई भी पहन लेगा। मैंने ऐसा ही किया था।''

मैं देख रहा था कि वह मेरी ही चप्पलें पहने हैं और मुझे समझा रहे हैं।

मैंने कहा, ''कोई बात नहीं। सुबह दूसरी खरीद लूँगा। आपकी चप्पलें नहीं गयीं, यह गनीमत है।''

फिर मैंने देखा कि एक बिस्तर की चादर गायब है। मैंने आयोजनकर्ताओं से कहा, तो उन्होंने जवाब दिया ''होटल

की बात, उनके हृदय में कुछ और माँगने की इच्छा ही नहीं उत्पन्न होती। प्रत्येक व्यक्ति केवल हजार–पाँच सौ सुइयों के संग्रह का स्वप्न देखता रहता है।

किसी वस्तु के प्राप्त कर लेने की इच्छा में जो मधुरता है वह उस इच्छा की पूर्ति में नहीं, इसका अनुभव मुझे बदरीनाथ के धूप में पारे के समान झिलमिलाते हुए हिम मय शिखरों के निकट पहुँचकर हुआ।

हनुमान चट्टी से पाँच–छः मील की जो दुर्गम और विकट चढ़ाई आारम्भ हुई थी, उसका अन्त एक ओर नर और दूसरी ओर नारायण नाम के पर्वतों तथा उनकी असंख्य श्रेणियों से घिरी हुई समतल भूमि में हुआ। श्वेत कमल की पंखुड़ियों के समान लगने वाले पर्वतों के बीच में निरन्तर कल–कल नादिनी अलकनन्दा के तीर पर बसी हुई वह पूरी हिमालय के हृदय में छिपी हुई इच्छा के समान जान पड़ी। वृक्ष, फूल और पत्तों का कहीं चिन्ह भी नहीं था। जहाँ तक दृष्टि जाती थी, निस्पन्द समाधि में मग्न तपस्विनी जैसी आडम्बरहीन सूनी पृथ्वी ही दिखाई देती थी और उतने ही निश्चल तथा उज्ज्वल हिमालय के शिखर ऐसे लगते थे, मानो किसी शरद पूर्णिमा की रात्रि में पहरा देते–देते, चाँदनी समेत जमकर जड़ हो गये हों।

बदरीनाथ के एक मील बाहर वहाँ के वयोवृद्ध रईस

विश्वास हो चला था कि उस सुदूर पर्वत प्रान्त में न तो रानी होने से अधिक कोई सहज काम है और न सुई से अधिक महत्वपूर्ण देने योग्य वस्तु।

मलिन भूरे बाल वाले बालक, लाल मूँगों की मालाओं से अपने को सजाये हुए, चकित दृष्टिवाली युवतियाँ तथा वात्सल्य से भरी हुई वृद्धाएं और जहाँ–तहाँ जाते हुए निश्चित निरीह से पुरुष सब को एक ही धुन थी। यहाँ तक कि वे स्थान भी, जहाँ शीत की अधिकता के कारण स्त्रियाँ और पुरुष कम्बल के दोनों छोरों को कन्धे पर चाँदी या किसी और धातु के काँटे से अटकाकर केवल उसी को अपना परिधान बनाये थे, इस राग से मुखरित हो रहे थे। कई बार तो छोटे–छोटे बालकों ने इस प्रकार घेर लिया कि अपना सारा सुई–डोरा फेंककर हमें भागना पड़ा।

कई पहाड़ी सम्भ्रान्त व्यक्तियों से पूछने पर ज्ञात हुआ कि इस विचित्र भिक्षावृति का कारण सुई का अभाव नहीं है। अब तो सब आवश्यक वस्तुएँ भेड़ों के द्वारा बदरीनाथ तक पहुँचाने का समुचित प्रबन्ध हो गया है, परन्तु यह प्रथा उस समय से सम्बन्ध रखती है जब यात्रियों के अतिरिक्त ऐसी वस्तुएं पहुँचाने का और कोई साधन न था।

उस समय विचार आया कि हमारे परम्परागत संस्कारों का मिटना कितना कठिन है। माँगना छोड़ना तो दूर

वाले ने धुलने को भेज दी होगी, दूसरी आ जायेगी।'' पर दूसरी आयी नहीं।

दूसरे दिन गोष्ठियाँ शुष् हो गयी। विषय बड़े अच्छे थे 1. ईमानदारी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में, 2. धर्म और ईमान, 3. बेईमानी का सौन्दर्यशास्त्र तथा 4. ईमानदारी और आधुनिकता।

सबसे ऊँचे स्तर की चर्चा हुई बेईमानी के सौन्दर्यशास्त्र पर। श्रोताओं ने बड़ी तारीफ की कि ईमानदारों के सम्मेलन में बेईमानी के सौन्दर्य शास्त्र पर चर्चा बहुत जरूरी थी। यह एक उपलब्धि है।

रात को गोष्ठियों से लौटा। देखा कि दो और चादरें गायब हैं। तीनों चली गयीं।

मेरे पास दो–तीन ईमानदार आये। कहने लगे ''हमारे शहर में ईमानदार महासंघ की शाखा नहीं है। हम अपना किराया लगाकर आये हैं। यहाँ इन आयोजनकों ने हमसे दस–दस रुपये लेकर हमें डेलीगेट बनाया है और हमारे अधिकार कुछ नहीं हैं।''

मैंने कहा, ''अधिकार क्यों नहीं हैं? तीन दिन रहने और खाने का अधिकार आपको है। फिर आपको चुनाव में भाग लेने का अधिकार है। जब इतनी दूर से आये हैं, तो कुछ बनकर जाइये – मंत्री, उपमंत्री या कम से कम कार्यकारिणी के सदस्य बनकर जाइये। सम्मेलन में आकर बिना कुछ बने

नहीं छोड़ना चाहिए।''

दूसरे दिन बैठक में जाने के लिए धूप का चश्मा खोजने लगा, तो नहीं मिला। साथ ही तो था।

मैंने एक दो लोगों से कहा, तो बात फैल गयी।

इसी समय बगल के कमरे में हल्ला हुआ, ''अरे मेरा ब्रीफकेस कहाँ चला गया यहीं तो रखा था।''

मैंने पूछा, ''उसमें पैसे तो नहीं थे?''

जवाब मिला, ''पैसे तो नहीं थे। कागजात थे।''

मैंने कहा, ''तो मिल जायेगा।''

मैंने बिना धूप का चश्मा लगाये बैठक में पहुँचा।

बैठक में पन्द्रह मिनट चाय की छुट्टी हुई। लोगों ने सहानुभूति प्रकट की। एक सज्जन आये। कहने लगे, , ''बड़ी चोरियाँ हो रही हैं। देखिए आपका धूप का चश्मा ही चला गया।''

वह धूप का चश्मा लगाये थे। मुझे याद था, एक दिन पहले वह धूप का चश्मा नहीं लगाये थे। मैंने देखा, जो चश्मा वह लगाये थे, वह मेरा ही था काले मोटे फ्रेम का। पर वह बेखटके मेरे सामने बैठे थे।

कहने लगे, ''आपने चश्मा लगाया नहीं था?''

मैंने कहा, ''रात को क्या चाँदनी में धूप का चश्मा लगाया जाता है? मैंने कमरे की टेबिल पर रख दिया था।''

वह बोले, ''कोई उठा ले गया होगा।''

मैं उन्हें देख रहा था और वह मेरा चश्मा लगाये

स्थायी सत्यों का निरूपण जिस परिमार्जित, सरल तथा स्पष्ट शैली में आपके साहित्य में हुआ है। वह अन्यत्र दुर्लभ है।

*****

पाठ परिचय

प्रस्तुत यात्रा वृत्त सुई दो रानी, डोरा दो रानी में लेखिका ने प्रसिद्ध तीर्थ स्थल बदरीनाथ तथा हिमालय की वादियों का वर्णन किया है। देश, काल तथा वातावरण के अनुसार लोगों के व्यवहार का वर्णन किया है कि जैसे ही यात्री बदरीनाथ की ओर जाते हैं, वहाँ के परम्परागत लोगों का व्यवहार किस प्रकार होता है। लेखिका ने यह भी उल्लेख किया है कि असंख्य यात्री आते हैं परन्तु स्थल की स्वच्छता पर ध्यान नहीं दिया जाता। ईश्वर सर्वव्यापी है, परन्तु कुछ विशेष लोग ईश्वर को भी बांधना चाहते हैं। परम्परा और वास्तविकता का मर्मस्पर्शी चित्र लेखिका ने मनोहरी रूप से उकेरा है।

*****

मार्ग में निरन्तर सुई दो रानी, डोरा दो रानी इत्यादि सुनते–सुनते बदरीनाथ के निकट पहुँचने तक मुझे यह

4. सुई दो रानी, डोरा दो रानी

महादेवी वर्मा

लेखक परिचय

महादेवी वर्मा का जन्म उत्तरप्रदेश के फर्ऊखाबाद नामक स्थान पर 1907 में हुआ। सन् 1933 में आपने प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। संगीत, दर्शन और चित्रकला में आपकी प्रगाढ़ रुचि थी। आप दीर्घकाल तक प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्राचार्य के पद पर सुशोभित रहीं। आपकी विविध साहित्यिक, शैक्षिक तथा सामाजिक सेवाओं के लिए भारत सरकार ने आपको पद्मभूषण उपाधि से अलंकृत किया। गद्य एवं पद्य दोनों क्षेत्रों में आपका समान अधिकार था।

आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं :–

1. कविता संग्रह : नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्य गीत, यामा तथा दीपशिक्षा

2. गद्य रचनाएं : अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं, श्रृंखला की कड़ियाँ, मेरा परिवार, पथ के साथी इत्यादि।

महादेवी जी की भाषा संस्कृतनिष्ठ होकर भी सरल, सरस एवं प्रवाहपूर्ण है। आपका शब्द चयन प्रभावपूर्ण तथा चित्रात्मक है। संस्मरण तथा रेखाचित्र लेखन की परम्परा में आपको महारत हासिल हुई है। साहित्य के सनातन तथा

इतमीनान से बैठे थे। बेईमानी का सौन्दर्यशास्त्र वह ठीक से समझ गये थे।

खैर, आयोजकों ने मुझे एक चश्मा खरीद दिया।

तीसरे दिन रात को लौटा, तो कुछ हरारत थी थोड़ी ठण्ड भी थी। मैंने सोचा, बिस्तर से कम्बल निकाल लूँ। पर कम्बल भी गायब था।

फिर हल्ला हुआ। स्वागत समिति के मन्त्री आये। कई कार्यकर्ता आये। मन्त्री कार्यकर्ताओं को डाँटने लगे, ''तुम लोग क्या करते हो? तुम्हारी ड्यूटी यहाँ है। तुम्हारे रहते चोरियाँ हो रही है। यह ईमानदार सम्मेलन है। बाहर यह चोरी की बात फैली, तो कितनी बदनामी होगी?''

कार्यकर्ताओं ने कहा, ''हम क्या करें? अगर सम्माननीय डेलीगेट यहाँ–वहाँ जायें, तो क्या हम उन्हें रोक सकते हैं?''

मन्त्री ने गुस्से से कहा, ''मैं पुलिस को बुलाकर यहाँ सबकी तलाशी करवाता हूँ।''

मैंने समझाया, ''ऐसा हरगिज मत करिये। ईमानदारों के सम्मेलन में पुलिस ईमानदारों की तलाशी ले, यह बड़ी अशोभनीय बात होगी। फिर इतने बड़े सम्मेलन में थोड़ी गड़बड़ी होगी ही।''

एक कार्यकर्ता ने कहा, ''तलाशी किनकी करवायेंगे आधे के लगभग डेलीगेट तो किराया लेकर दोपहर को ही

वापस चले गये।''

किसी ने कहा, ''मुझे तो शक है उन पर, जो हमारे संगठन में नहीं है और यहाँ दस रुपये देकर डेलीगेट बन गये।''

संयागे से दस रुपये वाला एक डेलीगेट वहां बैठा था। वह गुस्से में लाल होकर बोला, ''हमें क्या आप बेईमान समझते हैं? हम क्या यहाँ चोरी करने आये हैं? आप लोगों ने क्यों अखबारों में विज्ञप्ति छपवाई कि हम आ सकते हैं और दस रुपये देकर डेलीगेट बन सकते हैं? हम हरगिज न आते। मेरी अपनी पानी की कुप्पी चुरा ली गयी। मेरे साथ के जेब से पचास रुपये चुरा लिये गये। मुझे तो ऐसा लगता है कि आप लोगों ने सम्मेलन इसलिए बुलवाया कि डेलीगेटों से चोरी करा लें। तलाशी अपनी कराओ।''

बड़ी मुश्किल से मैंने उन्हें समझाया।

रात को पहनने के कपड़े सिरहाने दबाकर सोया। नयी चप्पलें और शेविंग का डिब्बा बिस्तर के नीचे दबाया।

सुबह मुझे लौटना था। मुझे उन लोगों ने अच्छा पैसा दिया। मैंने सामान बाँधा।

मन्त्री ने कहा ''परसाई जी, गाड़ी आने में देर है। चलिये, स्वागत समिति के साथ अच्छे होटल में भोजन हो जाये। अब ताल ालगा देते हैं।''

पर ताला ही गायब था। ताला तक चुरा लिया। गजब

हो गया।

मैंने कहा, ''रिक्शा बुलवाइये। मैं सीधा स्टेशन जाऊंगा। यहाँ नहीं रुकूँगा।''

मन्त्री हैरान थे। बोले, ''ऐसी भी क्या नाराजी है?''

मैंने कहा, ''नाराजी कतई नहीं है। बात यह है कि चीजें तो तब चुना ली गयीं। ताला तक चोरी चला गया। अब मैं बचा हूँ। अगर रुका तो मैं ही चुरा लिया जाऊँगा।''